ISSN-0971-8397

योजना

मई 2012 | विकास को समर्पित मासिक | ₹ 10

पर्यावरण और विकास

प्रमुख देशों के CO_2 उत्सर्जन (1992 और 2008)

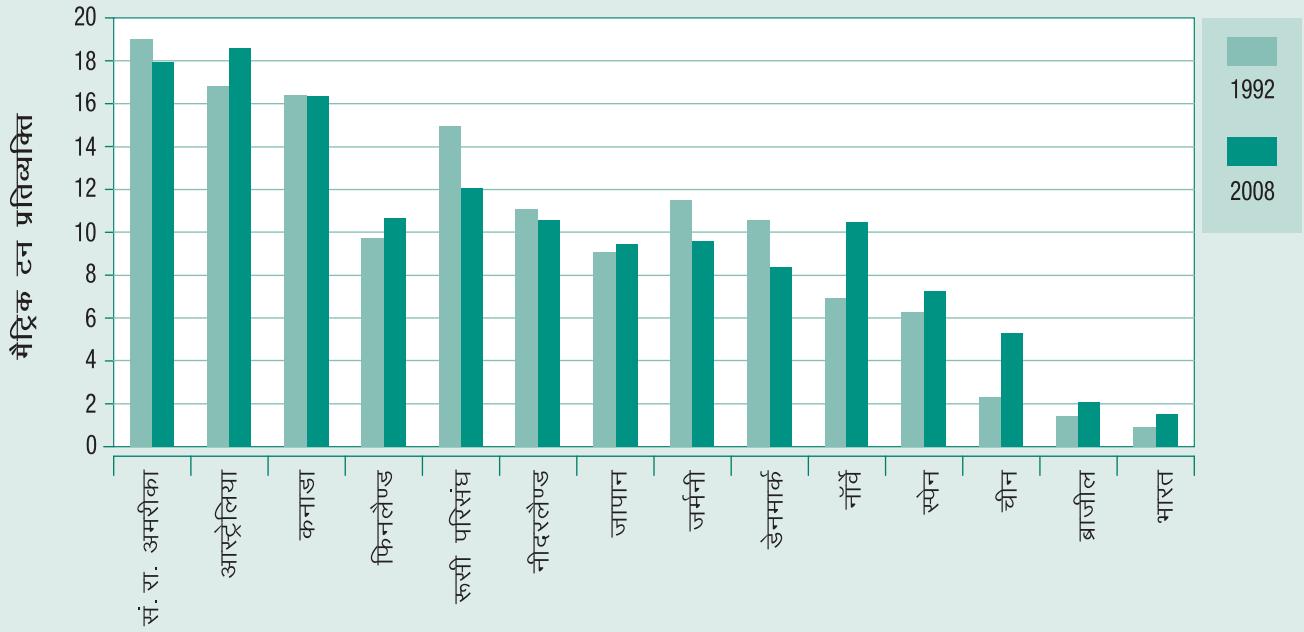

स्रोत : आर्थिक समीक्षा, 2011-12

विश्व-व्यापी ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन

विश्वव्यापी ग्रीन हाउस गैसों (जीएचजी) का अधिकांश उत्सर्जन विकसित देशों में होता है। जीएचजी का विश्वव्यापी उत्सर्जन 1945 से बढ़ गया है, वहीं कार्बन-डाईआक्साइड उत्सर्जन से हो रहे अधिकांश वृद्धि से, वैज्ञानिक इसे ऐतिहासिक जीएचजी उत्सर्जनों के स्टॉक के अलावा, जलवायु परिवर्तन की विश्वव्यापी समस्या बताते हैं, न कि वर्तमान जीएचजी उत्सर्जन मात्र की समस्या। अधिकांश देश, विशेषकर औद्योगीकृत देश, ज्यादातर मौजूदा वर्तमान उत्सर्जक होने के कारण सबसे बड़े ऐतिहासिक उत्सर्जक भी हैं तथा जलवायु परिवर्तन में मुख्य योगदान करते हैं। सबसे अधिक कुल उत्सर्जन करने वाले औद्योगीकृत देशों का स्थान सबसे अधिक प्रतिव्यक्ति उत्सर्जन करने वालों में भी है।

संचयी उत्सर्जनों का प्रतिशतता अंशदान

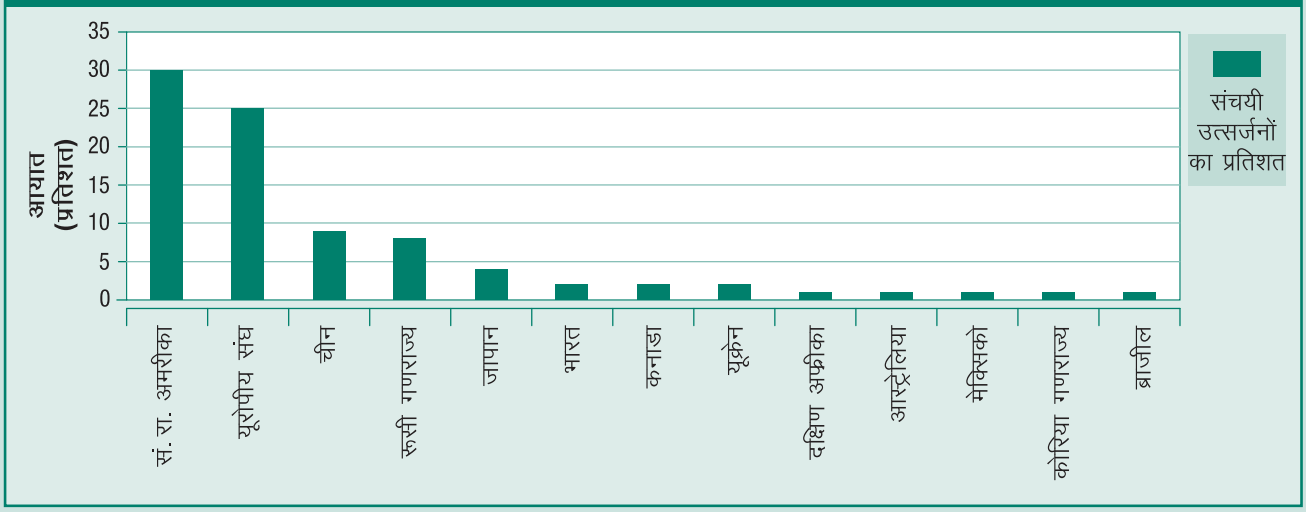

स्रोत : अर्थ ट्रेड (http://अर्थट्रेड.डब्ल्यूआरआई.आर्ग) वर्ल्ड विश्व संसाधन संस्थान द्वारा उपलब्ध सर्चेबल डाटाबेस रिजल्ट (http://www.wri.org)

योजना

वर्ष : 56 • अंक : 5 • मई 2012 • वैशाख-ज्येष्ठ, शक संवत 1934 • कुल पृष्ठ : 56

प्रधान संपादक
रीना सोनोवाल कौली

वरिष्ठ संपादक
राकेशरेणु

संपादक
रेमी कुमारी

संपादकीय कार्यालय

538, योजना भवन, संसद मार्ग,
नयी दिल्ली-110 001
दूरभाष : 23717910, 23096738
टेलीफैक्स : 23359578
ई-मेल : exeed.yojana@gmail.com
yojanahindi@gmail.com
वेबसाइट : www.yojana.gov.in
www.publicationsdivision.nic.in
a) dpd@nic.in
b) dpd@hub.nic.in

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
वी.के. मीणा

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन)
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26100207, 26105590
फैक्स : 26175516
ई-मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण : **रूबी कुमारी**

इस अंक में

संपादकीय	–	3
पारिस्थितिकी : हरित अर्थव्यवस्था का पहुंच मार्ग	एम.एम. स्वामीनाथन	5
पर्यावरण, विकास एवं आपदा : पंचतत्व संतुलन	संतोष कुमार	9
विकास की साझी परंपरा	सुभाष शर्मा	13
अनुकूलता और चुनौतियां	प्रांजल धर	17
धरती के अस्तित्व को विकास की चुनौती	महेश राठी	21
जल और स्वच्छता का जटिल अंतर्संबंध	रंजन के. पांडा	25
पर्यावरण संकट : भौतिकवाद और अध्यात्मवाद का द्वंद्व	सरोज कुमार वर्मा	29
पर्यावरण संरक्षण हमारी प्राथमिक आवश्यकता है	दिनेश मणि	33
दलदली ज़मीन के संरक्षण की ज़रूरत	नवनीत कुमार गुप्ता	35
वैकल्पिक स्रोत से बचेगा पर्यावरण	चन्द्रभान यादव	37
क्या आप जानते हैं? : राष्ट्रीय कौशल विकास निगम	–	41
शोधयात्रा : साड़ी का बार्डर बुनने का स्वचालित बाना	–	43
झरोखा जम्मू-कश्मीर का : भारत का सबसे लंबा सुरंग मार्ग	ममता सैनी	45
राजनय : ब्रिक्स का चौथा शिखर सम्मेलन	सुरेश अवस्थी	47
सामयिक : भारतीय नागर विमानन के सौ साल	अरुण कुमार वर्मा	49
सामयिक : सर्वाधिक होगी भारत में शहरी जनसंख्या	–	52

योजना **हिंदी के अतिरिक्त असमिया, बांग्ला, अंग्रेजी, गुजराती, कन्नड़, मलयालम, मराठी, तमिल, उड़िया, पंजाबी, तेलुगु तथा उर्दू भाषाओं में भी प्रकाशित की जाती है। पत्रिका मंगवाने हेतु, नयी सदस्यता, नवीकरण, पुराने अंकों की प्राप्ति एवं एजेंसी आदि के लिए मनीआर्डर/डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर 'महानिदेशक, प्रकाशन विभाग' के नाम से बनवा कर निम्न पते पर भेजें : व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार एवं विज्ञापन), प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड IV, तल VII, आर.के.पुरम, नयी दिल्ली-66 दूरभाष** : 26100207, 26105590 तार : सूचनाप्रकाशन।

सदस्य बनने अथवा पत्रिका मंगाने के लिए आप हमारे निम्नलिखित बिक्री केंद्रों पर भी संपर्क कर सकते हैं : सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110003 (दूरभाष : 24367260, 5610), हाल सं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली-110054 (दूरभाष : 23890205) * 701, सी- विंग, सातवीं मंजिल, केंद्रीय सदन, बेलापुर, नवी मुंबई-400614 (दूरभाष : 27570686) * 8, एसप्लानेड ईस्ट, कोलकाता-700069 (दूरभाष : 22488030) * 'ए' विंग, राजाजी भवन, बंसल नगर, चेन्नई-600090 (दूरभाष : 24917673) * प्रेस रोड नयी गवर्नमेंट प्रेस के निकट, तिरुवनंतपुरम-695001 (दूरभाष : 2330650) * ब्लॉक सं-4, पहला तल, गृहकल्प, एमजी रोड, नामपल्ली, हैदराबाद-500001 (दूरभाष : 24605383) * फर्स्ट फ्लोर, 'एफ' विंग, केंद्रीय सदन, कोरामंगला, बंगलुरु-560034 (दूरभाष : 25537244) * बिहार राज्य कोऑपरेटिव बैंक भवन, अशोक राजपथ, पटना-800004 (दूरभाष : 2683407) * हॉल सं-1, दूसरा तल, केंद्रीय भवन, सेक्टर-H, अलीगंज, लखनऊ-226024 (दूरभाष : 2225455) * अंबिका कॉम्प्लेक्स, फर्स्ट फ्लोर, पाल्दी, अहमदाबाद-380007 (दूरभाष : 26588669) * के.के.बी. रोड, नयी कॉलोनी, मकान संख्या-7, चेनीकुटी, गुवाहाटी-781003 (दूरभाष : 2665090)

चंदे की दरें : वार्षिक : ₹ 100 **द्विवार्षिक** : ₹ 180; **त्रैवार्षिक** : ₹ 250; **विदेशों में वार्षिक दरें : पड़ोसी देश:** ₹ 500; **यूरोपीय एवं अन्य देश** : ₹ 700।

योजना में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। ज़रूरी नहीं कि ये लेखक भारत सरकार के जिन मंत्रालयों, विभागों अथवा संगठनों से संबद्ध हैं, उनका भी यही दृष्टिकोण हो। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषयवस्तु के लिए *योजना* उत्तरदायी नहीं है।

आपकी राय

अपनी ज्योति स्वयं बनो

योजना मार्च 2012 का 'आपदा प्रबंधन' केंद्रित अंक पढ़ा। प्रकृति व मानव का चोली-दामन का साथ रहा है। जापान व बिहार के कोसी अंचल के लोगों में कोई भय नहीं है। आपदाओं के आने के पीछे मानवीय कारणों को प्रमुखता के साथ ज़िम्मेदार माना जाता है। मानव स्वयं अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मार रहा है। जहां पेड़ होने चाहिए वहां हमने पत्थर से बने मकानों का जंगल उगा दिया है।

भारत में 2001 में गुज़रात का भूकंप, 2004 में तटीय क्षेत्रों में सुनामी, 2006 में कवास (बाड़मेर) में बाढ़, 2010 में लेह में बादल का फटना, 2011 में सिक्किम में भूकंप के झटके महसूस किए गए। लेकिन भारत में आपदा प्रबंधन तंत्र कमज़ोर है। आपदाओं से बचने के लिए वृक्षारोपण व जनजागरुकता में अभिवृद्धि की जानी चाहिए। सरकारों को आपदा प्रबंधन तंत्र को माकूल बनाने के लिए इस मद का बजट बढ़ाना चाहिए। मानव को पारिस्थितिकी संतुलन बनाने का हर संभव प्रयास करना चाहिए। प्रकृति के साथ खिलवाड़ मानव के साथ खिलवाड़ है। इस संदर्भ में टी. नंदकुमार व राजीव कुमार के लेख सराहनीय लगे।

सुभाष सेतिया का स्त्री विमर्श पर आलेख अच्छा लगा। महिलाओं में मनु ईश्वर का निवास मानते हैं। आज नारी श्रद्धा, करुणा और सम्मान की पात्र बनने के बजाय बाज़ार में विज्ञापन के ज़रिये अपना शरीर प्रदर्शन कर रही है। नारी की बुरी दशा व दिशा के लिए समाज के साथ नारियां भी जिम्मेदार हैं। एक मां कन्या भ्रूण-हत्या का विरोध क्यों नहीं करती है? स्त्री को आगे बढ़ने के लिए जागरूक होकर स्त्रियों के लिए लड़ना होगा। ❑

रणवीर चौधरी 'विद्यार्थी'
सांजटा, बाड़मेर, राजस्थान

जानकारियों से भरा अंक

योजना का मार्च अंक पढ़ा। यह अंक काफी अच्छा लगा। क्योंकि इस अंक में आपदा प्रबंधन से जुड़े सभी अहम मुद्दों के बारे में विस्तार से बताया गया है। अंक में देश में अब तक आए भूकंपों, सुनामी, बाढ़, सूखा व उनसे प्रभावित लोगों का आंकड़ा भी दिया गया है। साथ ही विभिन्न आपदाओं से होने वाले फ़सलों के नुक़सान, घरों के नुक़सान, मवेशियों की मौत के भी आंकड़े दिए गए हैं। सरकार ने विभिन्न आपदाओं से निपटने के लिए अब तक क्या-क्या क़दम उठाए हैं और भविष्य में आपदाओं से निपटने के लिए उसकी क्या रणनीति है, इसे भी अंक में विस्तारपूर्वक बताया गया है। इसमें भूकंपरोधी मकान किस प्रकार का बनाना चाहिए, की चर्चा भी की गई है। परमाणु विकिरण के बारे में भी अच्छी जानकारी दी गई है और हमारे देश में बन रहे परमाणु ऊर्जा संयंत्रों के बारे में पूरी जानकारी उपलब्ध कराई गई है। देश के समुद्र तटों की सुरक्षा के लिए सरकार ने क्या-क्या क़दम उठाए हैं, इसकी विस्तृत जानकारी भी अंक से प्राप्त हुई।

प्राकृतिक आपदा के चलते हर वर्ष देश में भारी जानो-माल का नुक़सान होता है। परंतु प्राकृतिक आपदा को रोक पाना मुश्किल है। अगर इससे बचने के उपाय ढूंढ लिए जाएं, तो अच्छा होगा। इस अंक में लेख 'महिला असमानता की विविध परतें', 'विकास का उचित स्तर' समेत आपदा प्रबंधन के सभी लेख अच्छे व जानकारीभरे हैं। 'आपदा प्रबंधन' संबंधित इस अंक के लिए *योजना* पत्रिका की टीम का बहुत-बहुत धन्यवाद। ❑

महेंद्र प्रताप सिंह
मेहरागांव, अल्मोड़ा, उत्तराखंड

विशेष अंक

योजना का मार्च 2012 अंक जरा विशेष लगा। विशेषज्ञों द्वारा लिखे गए आलेखों के माध्यम से भारत में आपदाओं से सामना करने की नीतियों को देश के नागरिकों के समक्ष प्रस्तुत किया गया है जो काबिलेतारिफ़ है। लेखक एन. विनोद चंद्र मेनन के आलेख 'आपदा प्रबंधन की समस्या एवं चुनौतियां' ने कमज़ोर संस्थाएं एवं नीतियों का कमज़ोर अनुपालन और व्यवस्थाजन्य अक्षमताओं को समझाने का कार्य किया। जी. पदमनाभन का लेख वास्तव में गागर में सागर है। टी. नंदकुमार का लेख 'भारत में आपदा प्रबंधन' एवं नीलू अरुण के 'मानव विकास रिपोर्ट 2011 एवं आपदा प्रबंधन' में भी रोचक सामग्री पढ़ने को मिली। अचिंत्य एवं राजीव कुमार द्वारा लिखे गए लेख 'भारतीय मानक संहितानुसार भूकंपरोधी भवनों का रूपांकन' में जिस प्रकार से भूकंपरोधी यंत्र, भवन की आकृति, भवनों के प्रकार, अग्नि-सुरक्षा तथा अन्य बातों को रेखाचित्रों के माध्यम से समझाने का कार्य किया गया है वह आने वाली प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा का व्यावहारिक ज्ञान प्रदान करता है। 'क्या आप जानते हैं' और 'शोधयात्रा' में भी काफी जानकारियां पढ़ने को मिली हैं। विमर्श स्तंभ में लेखक ज्यां द्रेज एवं अमर्त्य सेन द्वारा लिखे लेख 'विकास का उचित स्थान' में जिस प्रकार से प्रगति और विकास व दक्षिण एशिया में भारत की अवनति उपसंहार के रूप में प्रस्तुत किया गया है वह सभी प्रतियोगी छात्रों के लिए लाभदायक होगा। सुभाष सेतिया द्वारा लिखित आलेख 'महिला असमानता की विविध परतें' काफी रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक है। इसी के साथ नये प्रकाशन में समीक्षक अरविंद कौर द्वारा की गई समीक्षा भी काफी अच्छी लगी। ❑

सुजीत कुमार
भागलपुर, बिहार
ई-मेल : sujitkumarmachinist@gmail.com

संपादकीय

संपोषणीय विकास के पथ पर भारत की यात्रा जहां हर्ष का विषय है, वहीं आत्मविश्लेषण का कारण भी है। यह कहानी 1980 और 1990 के दशक के प्रारंभिक वर्षों से शुरू होती है, जब आर्थिक सुधारों की शुरुआत हुई थी और जिसके कारण ही भारत की आर्थिक विकास दर को पंख लगे थे। यह वह समय था जब विश्व के अनेक देश पर्यावरण की समस्याओं को लेकर चिंतित हो रहे थे और साथ ही उनका निवारण करने का प्रयास कर रहे थे। ब्राज़ील की राजधानी रियो द जनेरियो में 1992 में हुआ पृथ्वी सम्मेलन इन्हीं सब चिंताओं को सामने लाने और उनका समाधान खोजने की कोशिश थी। पिछले दो दशकों में भारत की आर्थिक विकास की गति अप्रत्याशित रूप से तेज़ रही है, परंतु इसका एक दुखद पहलू यह रहा है कि मानव विकास और पर्यावरण संपोषणीयता के सूचकांकों में अपेक्षित विकास हो नहीं पाया है।

पिछले दो दशकों में चुनौतियां अधिक मुखर हुई हैं। पर्यावरण और वन मंत्रालय की 2009 की पर्यावरण की स्थिति संबंधी रिपोर्ट में भारत के सामने मौजूद पांच प्रमुख चुनौतियों का उल्लेख किया गया है, ये हैं- जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा, जल सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा और शहरीकरण का प्रबंधन। जलवायु परिवर्तन हमारी प्राकृतिक पर्या-प्रणालियों में दखल दे रहा है और देश की कृषि पर उसका काफी ख़राब असर पड़ने की संभावना है। देश के 58 प्रतिशत लोग अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर हैं। जलवायु परिवर्तन के प्रभाव से प्रमुख नदियों के जल स्रोत हिमालयी हिमनदों में पानी के भंडारण, भूगर्भीय जल के पुनर्संभरण के साथ-साथ समुद्र के जलस्तर में वृद्धि से लंबे तटीय क्षेत्रों और आबादियों को ख़तरा बना हुआ है।

पर्यावरण की चिंताओं के संदर्भ में संपोषणीय विकास भारतीय नीति और नियोजन की आवर्ती विषयवस्तु बनी हुई है। संपोषणीय विकास के स्तंभ संविधान प्रदत्त मौलिक अधिकारों में निहित हैं। अनुच्छेद 21 की न्यायपालिका ने विशद व्याख्या करते हुए उसमें स्वच्छ वातावरण का अधिकार, सम्मान सहित जीने का अधिकार और अन्य संबंधित अधिकारों को समाविष्ट कर दिया है।

राष्ट्रीय पर्यावरण नीति, 2006 में प्रयास किया गया है कि पर्यावरण के सरोकारों को विकास की गतिविधियों में मुख्य स्थान दिया जाए। सरकार अपनी नीतियों के जरिये पारिस्थितिकीय समस्याओं को वैकासिक प्रक्रिया के साथ जोड़ने का प्रयास करती रही है ताकि पर्यावरण में कोई स्थायी बदलाव लाए बिना आर्थिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। चुनौतियां बहुत बड़ी हैं। ऊर्जा के साधनों के अभाव वाले देश में उसकी बढ़ती आवश्यकताओं को पूरा करना एक चुनौती है। तेज़ी से बढ़ रहा शहरीकरण और रोज़गार के लिए विनिर्माण क्षेत्र का संवर्धन भी कोई कम बड़ी चुनौती नहीं है।

इसी के साथ-साथ सामुदायिक स्तर पर प्रगति की भावना भी सुदृढ़ हुई है। तीन दृष्टांतों से स्पष्ट है कि भारत ने संपोषणीय विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धियां हासिल की हैं। ये हैं- जीवन प्रत्याशा अर्थात औसत आयु, वन क्षेत्र में वृद्धि और युवा महिलाओं में साक्षरता।

भारत जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने हेतु कृत-संकल्प है। हमने संपोषणीय तथा समावेशी, अल्प कार्बन विकास के पथ पर आगे बढ़ने की प्राथमिकताएं निश्चित की हुई हैं। प्रतिष्ठित लेखकों और विशेषज्ञों ने *योजना* के प्रस्तुत अंक में अपने विद्वतापूर्ण और विचारपरक लेखों के माध्यम से पर्यावरण और संपोषणीय विकास के विभिन्न मुद्दों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। भारतीय और वैश्विक संदर्भों में रचित ये लेख हमारा ज्ञानवर्धन करेंगी, ऐसी आशा है। ❑

CHRONICLE IAS ACADEMY

सिविल सर्विसेज क्रॉनिकल की पहल

सामान्य अध्ययन

- पाठ्यक्रम के मूल से सेशन की शुरूआत
- अभ्यास आधारित शिक्षण
- विस्तृत अध्ययन सामग्री
- समसामयिकी पर साप्ताहिक सेशन

For Detail SMS:
CAMPUS JUNE BATCH to 56677

समाजशास्त्र

(डॉ. सुरेन्द्र कुमार सिंह)

सत्र प्रारंभ – 1 जून 2012

Reach us
2nd floor, 2520, Hudson Lane,
Vijay Nagar Chowk, New Delhi - 9
(Near GTB Nagar Metro Station)
Call: 09582263947, 09953120676
09582948815

सिविल सर्विसेज़
क्रॉनिकल
22 वर्षों से सफलता का मार्गदर्शक

YH-16/2012

पर्यावरण और विकास

पारिस्थितिकी हरित अर्थव्यवस्था का पहुंच मार्ग

● एम.एस. स्वामीनाथन

2012 स्टॉकहोम में हुए मानवीय पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन की 40वीं वर्षगांठ (1972) और रियो द जनेरो में संपन्न पर्यावरण एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन की 20वीं वर्षगांठ (1992) का वर्ष है। स्टॉकहोम में स्व. इंदिरा गांधी ने, निम्नलिखित शब्दों में बिना पर्यावरण को कोई क्षति पहुंचाए आर्थिक विकास के मापन में सामाजिक संपोषणीयता का आयाम जोड़ दिया था :

''एक ओर जहां संपन्न वर्ग हमारी ग़रीबी की ओर तिरस्कारपूर्वक देखता है वहीं दूसरी ओर वे हमें अपने तौर-तरीक़ों के विरुद्ध चेतावनी भी देते हैं। हम पर्यावरण को और अधिक क्षति नहीं पहुंचाना चाहते, और इसी के साथ-साथ हमारे तमाम लोगों की घोर ग़रीबी को एक क्षण के लिए भी भुलाया नहीं जा सकता। क्या ग़रीबी और ज़रूरत सबसे बड़े प्रदूषक नहीं हैं? उदाहरण के लिए जब तक हम वनवासियों और जनजातीय लोगों को रोज़गार नहीं देते अथवा उनकी रोज़मर्रा की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए उनकी क्रय शक्ति नहीं बढ़ाते, तबतक हम उन्हें अपने भोजन और आजीविका के लिए जंगल काटने से नहीं रोक सकते। वे जब स्वयं ही वंचित महसूस करते हैं, हम उनसे पशुओं के संरक्षण के लिए कैसे आग्रह कर सकते हैं? जो लोग गांवों, गंदी बस्तियों, झुग्गी-झोपड़ियों में रहते हैं, उनसे सागर, नदियों और वायु को स्वच्छ रखने के लिए कैसे कहा जा सकता है? खासकर तब जबकि उनका स्वयं का जीवन भी संदूषित होता है? निर्धनता की स्थितियों में पर्यावरण को नहीं सुधारा जा सकता। और, न ही विज्ञान और प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल के बगैर ग़रीबी दूर की जा सकती है।''

1984 में अपनी मृत्यु से कुछ महीने पूर्व विश्व पर्यावरण दिवस के अवसर पर अपने संदेश में उन्होंने भूमि, जल, वन, जैव विविधता, सागर और वातावरण से परिपूर्ण हमारी जीवनरक्षक प्रणाली के संरक्षण और बुद्धिमत्तापूर्ण प्रबंधन की बात कही थी:

''हरीतिमा, उर्वर किंतु भंगुर मिट्टी का संरक्षण करते हुए, वातावरणीय परिस्थितियों में संतुलन बनाए रखकर, ताज़े पानी की आपूर्ति कर तथा बाढ़ और सूखे से बचाने के लिए जल के प्रवाह को मर्यादित कर हमारे लिए एक हरित सुरक्षा कवच बनाती है। पशुओं और मानवों का जीवन अनंत प्रकार से हरीतिमा पर निर्भर है। परंतु हमारा यह हरित कवच, विशेषकर वनों में, समृद्ध वर्ग के लोभ और निर्धनों की आवश्यकताओं के कारण ख़तरे में पड़ गया है।''

संपोषणीय विकास के लिए काम करने वाले लोगों के सामने जो चुनौतियां हैं, वे हैं तेज़ी से बढ़ती लोभ संस्कृति पर लगाम लगाना और देश के करोड़ों निर्धनों के ग़रीबी के जाल को नष्ट करना। 'अंतरिक्ष यान पृथ्वी में कृषि' (एग्रीकल्चर इन स्पेसशिप अर्थ) विषय पर व्याख्यान देते हुए 1973 में लेखक ने पर्यावरण संरक्षण के लिए देश में 'डू इकोलॉजी' (पारिस्थितिकी बचाओ) की आवश्यकता का उल्लेख किया था। उस समय जो इन पंक्तियों के लेखक ने कहा था, वह इस प्रकार है: ''संपन्न देशों में जिस पर्यावरण नीति की दुहाई दी जाती है वह पिछली शताब्दी में प्राकृतिक संसाधनों के भारी दोहन से निष्पादित उच्च जीवनस्तर के संरक्षण के लिए बनाई गई है। इस विकास की प्रक्रिया में प्राकृतिक संसाधनों को गंभीर क्षति पहुंची है। यह नीति 'इसे न करें' की तमाम शर्तों पर आधारित और आवश्यकताजनित है। यह अवश्यम्भावी

है क्योंकि लक्ष्य है– पहले हो चुकी क्षति की भरपाई करना अथवा आगे उसी प्रकार की क्षति को होने से रोकना।

परंतु, निर्धन राष्ट्रों को भूखी धरती से और अनाज पैदा करने, और अधिक कपड़ों की व्यवस्था करने तथा अधिक मकान बनाने की आवश्यकता और इच्छा से जूझना पड़ रहा है। उन्हें पता है कि जीवन का बेहतर स्तर और अधिक औद्योगिक व्यवसायों के लिए जन संसाधनों को मुक्त करने की कृषि की क्षमता पर निर्भर रहता आया है। इतिहास इस बात का साक्षी है। अत: वे स्वाभाविक रूप से अपनी बढ़ती जनसंख्या के लिए अधिक उत्पादक कार्यों और लाभप्रद रोज़गार के लिए और अधिक उद्योग लगाना चाहते हैं। उनके लिए, निर्धनता की स्थितियां और मानवीय तथा अन्य क़चरे के निपटान के अपर्याप्त प्रबंध, कारखानों से निकलने वाले प्रदूषित जल अथवा खेतों के उर्वरकों से होने वाले प्रदूषण की अपेक्षा वायु एवं जल प्रदूषण के ज्यादा बड़े कारण हैं। चूंकि प्रदूषण के कारण ज्यादातर अलग-अलग हैं, उनके समाधान भी अलग-अलग होंगे और विकसित देशों द्वारा आज जो नीतियां प्रचारित की जा रही हैं, उनकी नकल करना एक गंभीर भूल होगी। हमें जिस चीज़ की आवश्यकता है, वह है–'डू इकोलॉजी' (पारिस्थितिकी बचाओ) की संस्कृति अर्थात पारिस्थितिकी को बिना कोई क्षति पहुंचाए वर्तमान और भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं को पूरा करना।''

जब तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी चाहती थीं कि छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85) में देश में समावेशी विकास को चरितार्थ करने वाली हरित अर्थव्यवस्था के संवर्धन का रास्ता दिखाई देना चाहिए। इसके फलस्वरूप, देश में नियोजन के इतिहास में पहली बार हमें दो नये अध्याय जोड़ने पड़े। एक था 'पर्यावरण एवं विकास' तथा दूसरा 'महिला एवं विकास' इन अध्यायों में विकास की सभी परियोजनाओं में पर्यावरणीय और लैंगिक (स्त्री-पुरुष समानता) के आयामों को मुख्य भूमिका निभाने पर ज़ोर दिया गया था। दूसरे शब्दों में कहें तो छठी योजना में नियोजित विकास को प्रकृति, महिला और निर्धनोन्मुखी रूप दिया गया था।

रियो सम्मेलन (1992) ने जलवायु और जैव-विविधता के क्षेत्रों में वैश्विक सम्मेलनों के साथ-साथ 'एजेंडा 21' अपनाने का रास्ता दिखाया। 'एजेंडा 21' पर्यावरण की दृष्टि से तथा आर्थिक और सामाजिक रूप से संपोषणीय विकास का रास्ता दिखाया गया था। इस समय हम 1992 के बाद से 'अच्छी पारिस्थितिकी अच्छा व्यवसाय है' के संदेश के प्रसार में हुई प्रगति के आकलन में लगे हैं। जलवायु परिवर्तन के शमन और अनुकूलन के क्षेत्रों में हमने अपनी प्रतिबद्धता कम कार्बन वाले विकास के मार्ग के प्रति दिखाई है। चूंकि तापमान, वर्षा, सूखा, बाढ़ और समुद्र के स्तर में वृद्धि से भोजन और जल की सुरक्षा गंभीर रूप से प्रभावित होगी, हमने कारक परिवर्तन में जलवायु के उतार-चढ़ाव को सहने में समर्थ कृषि तकनीकों के विकास और प्रसार के लिए अनेक क़दम उठाए हैं। जहां तक जल का प्रश्न है, उसकी आपूर्ति में वृद्धि और मांग के प्रबंधन पर गंभीरतापूर्वक ध्यान दिया जा रहा है। जल संसाधन मंत्रालय ने चार वर्ष पूर्व पानी की प्रति बूंद से पैदावार और आय में वृद्धि के उद्देश्य से राष्ट्रीय कृषक सहभागिता कार्यक्रम शुरू किया था। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग ने 'पानी के लिए युद्ध' (वार फॉर वाटर) नाम का एक कल्पनाशील कार्यक्रम शुरू किया है। इसमें 'वार' अंग्रेज़ी के तीन शब्दों– विनिंग (जीतना), ऑगमेंटेशन (संवर्धन) और रिनोवेशन (पुनर्नवीकरण) के पहले अक्षर से मिलाकर बना है।

हमारी पारिस्थितिकी सुरक्षा को सुदृढ़ बनाना महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोज़गार गारंटी कार्यक्रम (मनरेगा) का प्रमुख लक्ष्य है। कानूनी रूप से काम का अधिकार देने वाला यह कार्यक्रम विश्व का सबसे बड़े सामाजिक सुरक्षा कार्यक्रमों में से एक है। मनरेगा की रूपरेखा इस प्रकार तैयार की गई है कि जल संचय, वाटरशेड प्रबंधन और मिट्टी की उर्वरा शक्ति में संवर्धन के जो कार्यक्रम चल रहे हैं उन्हें और मज़बूती प्रदान की जा सके। यद्यपि इस कार्यक्रम के तहत जो काम किया जाता है, वह 'अकुशल श्रम' की श्रेणी में गिना जाता है, परंतु वास्तविकता में इसमें बुद्धि और श्रम का सम्मिश्रण होता है। मैं इसीलिए जल संचय और वाटरशेड प्रबंधन के क्षेत्र में काम करने वाली सर्वोत्तम मनरेगा टीमों को 'पर्यावरण रक्षक पुरस्कार' दिए जाने की पैरवी करता रहा हूं। इससे श्रमिकों को अपने कार्य में मकसद मिलेगा और साथ ही गर्व की भावना भी आएगी।

कुछ वर्षों पहले सुझाव दिया गया था कि राष्ट्रीय पादप विविधता संरक्षण एवं कृषक अधिकार प्राधिकरण (पीवीपीएफआरए) को कृषि-जैव विविधता संरक्षण और संवर्धन के क्षेत्र में जनजातीय और ग्रामीण पुरुषों और महिलाओं के अमूल्य योगदान का मान्यता प्रदान करने के लिए जीनोम रक्षक पुरस्कार की स्थापना करनी चाहिए। पीवीपीएफआरए ने यह पुरस्कार देना शुरू कर दिया है और अब तक अनेक जनजातीय और ग्रामीण समुदायों को इन पुरस्कारों से व्यापक मान्यता और स्वीकार्यता मिली है। अब तक ये समुदाय लोकहित के लिए अपने व्यय पर बहुमूल्य जैवविविधता का संरक्षण करते रहे हैं। कम-से-कम हम इतना तो कर ही सकते हैं कि उनके प्रति अपना आभार व्यक्त करने के लिए और सामाजिक सम्मान और पहचान प्रदान कर सकें। बहुमूल्य पशु प्रजातियों का संरक्षण करने वालों को भी इसी प्रकार की मान्यता और पहचान देने की आवश्यकता है।

खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) ने हाल ही में ग्लोबली इम्पॉर्टेंट एग्रीकल्चरल हेरिटेज सिस्टम्स (जीआईएएचएस-वैश्विक रूप से महत्वपूर्ण कृषि संबंधी धरोहर प्रणालियां) शीर्षक कार्यक्रम के अंतर्गत कृषि के क्षेत्र में विश्व के धरोहर क्षेत्रों की मान्यता देने का सिलसिला शुरू किया है।

जीआईएएचएस का उद्देश्य उन उल्लेखनीय असाधारण भूमि उपयोग प्रणालियों और प्राकृतिक परिदृश्यों को मान्यता प्रदान करना है जो समुदायों द्वारा संपोषणीय विकास के लिए पर्यावरण को अपनी आवश्यकताओं और आकांक्षाओं के साथ जोड़ने के कारण जैवविविधता के क्षेत्र में और महत्वपूर्ण माने जाते हैं। देश में इस कार्यक्रम के अंतर्गत निम्नलिखित स्थलों को मान्यता मिली है :

- पारंपरिक कृषि संबंधी प्रणाली, कोरापुट, ओडिशा।
- अधो-समुद्रस्तरीय कृषि प्रणाली, कुट्टानाड, केरल।

कोरापुट प्रणाली में महिलाओं ने

जैवविविधता के संरक्षण में प्रमुख भूमिका अदा की है। कुट्टटानाड प्रणाली किसानों द्वारा 150 वर्ष से भी पूर्व विकसित की गई थी। उन्होंने उस समय समुद्र की सतह से नीचे धान और अन्य फ़सलों की खेती की पद्धति सीखकर अपनी खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित की थी। वैश्विक तपन के प्रभाव से समुद्र के स्तर में हो रही वृद्धि के कारण कुट्टानाड प्रणाली ने पूरे विश्व का ध्यान खींचा है। केरल सरकार ने कुट्टानाड में अधो-समुद्रस्तरीय कृषि हेतु अंतरराष्ट्रीय अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केंद्र की स्थापना का निर्णय लेकर एक दूरदर्शी कदम उठाया है। केरल के वर्ष 2012-13 के बजट में इसके लिए पर्याप्त धनराशि की व्यवस्था की गई है। भारत सरकार ने भी वेम्बानाड झील के आस-पास कुट्टानाड और उससे लगे हुए क्षेत्रों के पर्यावरणीय विकास के लिए पर्याप्त राशि स्वीकृति की है।

'पारिस्थितिकी बचाओ' का एक और उदाहरण है केरल का राष्ट्रीय शांति घाटी वन (साइलेंट वैली नेशनल फॉरेस्ट) का एक जैवमंडल क्षेत्र में संरक्षण। ऐसा माना जाता है कि भारी वर्षा वाले सदाबहार शांत घाटी के जंगलों का विकास 5 करोड़ वर्ष से भी अधिक समय में हुआ है। केरल की तत्कालीन सरकार ने 1978 में 240 मेगावाट विद्युत उत्पादन के लिए इस अनूठे जंगल के एक अंश के त्याग का निर्णय लिया। इस जंगल की यात्रा के दौरान, 1979 में प्रकृति के इस अमूल्य उपहार को बचाने की एक योजना तैयार की गई। इसके लिए उन आवश्यकताओं की पूर्ति का रास्ता निकाला गया, जिनके लिए जंगलों को नष्ट किया जाने वाला था। ये हैं– विद्युत उत्पादन, मल्लापुरम और पालघाट ज़िलों में 10 हज़ार हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई और क़रीब 3 हज़ार लोगों के लिए रोज़गार का सृजन। इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए लेखक ने 1979 की रिपोर्ट में निम्नलिखित सुझाव दिए थे :

- पालघाट और मल्लापुरम क्षेत्र की तात्कालिक विद्युत आवश्यकता की पूर्ति इदुक्की परियोजना क्षेत्र से पारेषण की उपयुक्त व्यवस्था कर की जा सकती है। छठी योजना में केरल की पारेषण योजनाओं के लिए 45 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। इसके अतिरिक्त 15.5 करोड़ रुपये की 3×130 मेगावाट की इदुक्की परियोजना के दूसरे चरण को योजना आयोग पहले ही स्वीकृति दे चुका है। राष्ट्रीय विशेषज्ञों के समूह और सौर ऊर्जा के उपयोग की संभावनाओं को दृष्टिगत रखते हुए केरल राज्य विद्युत मंडल की सहायता से ऊर्जा की आवश्यकता और रणनीति की एक दीर्घकालिक रणनीति तैयार की जानी चाहिए।
- क्षेत्र में उपयुक्त उद्योगों को प्रोत्साहन देने के लिए क़दम उठाए जाने चाहिए ताकि रोज़गार के अतिरिक्त अवसर पैदा किए जा सकें। संपोषणीय संसाधन उपयोग रणनीतियों पर आधारित पालघाट और मल्लापुरम में रोज़गार और आय सृजन के कार्यक्रम तैयार करने के लिए एक व्यापक संगठन बनाया जाना चाहिए।
- राज्य के 1980-81 के बजट में एसवीएचपी के लिए रखे गए 2 करोड़ रुपये का उपयोग भूजल विकास, इदुक्की से पारेषण लाइन खींचने की व्यवस्था और उपयुक्त औद्योगिक एवं कृषि परियोजनाओं के लिए किया जा सकता है। पालघाट और मल्लापुरम क्षेत्र के त्वरित विकास हेतु छठी योजना में योजनागत व्यय के तहत समुचित वित्तीय आवंटन किया जाना चाहिए। बेहतर होगा कि एसवीएचपी का पूरा आवंटन इसी उद्देश्य के निमित्त आरक्षित कर दिया जाए।

उपर्युक्त सुझाव उन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जिनके लिए जंगल के एक अंश का उपयोग किया जाना था। 'पारिस्थितिकी बचाओ' के क्षेत्र में हमें बेहतर विशेषज्ञता की आवश्यकता है ताकि हम दुनिया को दिखा सकें कि पारिस्थितिकी को क्षति पहुंचाए बिना विकास के लक्ष्य कैसे हासिल किए जा सकते हैं। 'इसे मत करो' कहने के बजाय हमें यह कहना सीखना होगा कि 'इसे इस प्रकार करो कि आपके कार्यों से लोगों को स्थायी लाभ मिले।'

सौभाग्य से, जलविद्युत परियोजना के क्रियान्वित होने से पूर्व श्रीमती इंदिरा गांधी प्रधानमंत्री बन गईं और उन्होंने प्रो. एम.जी. के. मेनन की अध्यक्षता में समूचे वन क्षेत्र को एक जैवमंडल के रूप में विकसित करने के लिए एक समिति गठित की। अपनी रिपोर्ट में लेखक ने यही सुझाव दिया था।

जलवायु परिवर्तन के नतीज़े अधिकतर निर्धन राष्ट्रों और सभी राष्ट्रों में निर्धनों को भोगने पड़ेंगे, क्योंकि जलवायु परिवर्तन के कारण आने वाली आपदाओं का सामना करने की उनकी क्षमता बहुत मामूली होती है। अतएव, कार्बन उत्सर्जन और कार्बन अवशोषण के बीच संतुलन बैठाने के साथ-साथ हमें स्थानीय समुदायों की क्षमताओं को सुदृढ़ बनाने का प्रयास करना चाहिए ताकि वे उच्चतर मध्यमान तापमान, बार-बार आने वाली बाढ़ और सूखे तथा समुद्र की सतह में वृद्धि से पैदा होने वाली चुनौतियों का सामना करने में समर्थ हो सकें। एम.एस. स्वामीनाथन अनुसंधान संस्थान ने प्रत्येक पंचायत के एक-एक पुरुष एवं महिला सदस्य को जलवायु ज़ोखिम प्रबंधक के रूप में प्रशिक्षित करने का कार्यक्रम तैयार किया है। ये सामुदायिक जलवायु ज़ोखिम प्रबंधक जलवायु परिवर्तन के ज़ोखिम के शमन और अनुकूलन के क्षेत्र में पूर्णतया प्रशिक्षित होंगे। उन्हें कम अथवा अधिक वृष्टि के विपरीत परिणामों को न्यूनतम स्तर पर लाने के लिए सूखा और बाढ़ संहिताओं के परिचालन का प्रशिक्षण दिया जाएगा। उन्हें यह भी सिखाया जाएगा कि अच्छे मौसम संहिता के ज़रिये किस प्रकार वर्षा के सामान्य मौसम का अधिकतम लाभ उठाया जा सके। वे उर्वरक वृक्षों के रोपण, बायोगैस संयंत्रों के परिचालन और वर्षा जल-संचयन हेतु जलकुंडों को प्रोत्साहन देने का कार्य करेंगे। इस प्रकार जलवायु परिवर्तन की समस्या से निपटने के लिए प्रधानमंत्री के आठ मिशनों के तहत राष्ट्रीय स्तर पर जो प्रयास हो रहे हैं उनमें हाथ बंटाने के लिए स्थानीय स्तर की जलवायु साक्षरता और जलवायु परिवर्तन की समस्याओं के शमन और अनुकूलन योजनाओं को शामिल करने से उर्वरक वृक्षारोपण के ज़रिये मृदा कार्बन बैंकों के निर्माण से दोहरा लाभ होगा। एक तो फ़सल की उत्पादकता में वृद्धि होगी, दूसरे वातावरण में कार्बन का उत्सर्जन भी कम होगा। ❑

(लेखक राज्यसभा सदस्य और एम.एस. स्वामीनाथन अनुसंधान प्रतिष्ठान के अध्यक्ष हैं।
ई-मेल : swami@mssrf.resp.in, msswami@vsnl.net)

AN ISO 9001:2008 CERTIFIED INSTITUTE

There is no holiday in moral life.

लोक प्रशासन

(हिन्दी माध्यम)

By **Atul Lohiya**

(A person who believes in scientific approach and hard work)

Dynamic Approach for Dynamic Subject

- Special **Audio-Visual Class** on each & every Hot topics
- **200 Hours Lecture** and **Discussion**
- Computerised **Current updated best Study Material** on each and every topic
- **Case Studies, Flow Chart, Diagram, IIPA** Journal based lecture and study material
- Revision notes with **Chart and Diagram**
- **Daily Test** and **News Paper** analysis
- Unit wise **Answer Formating** of UPSC Questions (Last 10 years)
- Complete Coverage of Syllabus & **100% Syllabus (Ist & IInd Paper)** by **Atul Lohiya**

* *UPSC* के साथ *UP, MP, Raj., Bihar, Uttaranchal, Jharkhand Chhattisgarh, Haryana, Himachal PCS* की भी तैयारी;

संस्थान के सफल विद्यार्थियों द्वारा समय-समय पर मार्गदर्शन!

पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध

(पूर्णतः संशोधित; परिमार्जित एवं परिवर्धित कम्प्यूटराइज्ड नोट्स)

MAINS - 7500/- • MAINS + PRE. - 8500/-

डाक खर्च - 300/- अतिरिक्त

लोक प्रशासन

वर्तमान और भविष्य के लिए एकमात्र सुरक्षित विषय

★सर्वोत्कृष्ट संस्थान ★सर्वोत्कृष्ट नोट्स

★सर्वोच्च रैंक ★सर्वोच्च अंक...

सामान्य अध्ययन हिन्दी माध्यम

अतुल लोहिया एवं विशेषज्ञ समूह

- ★ मुख्य सह प्रारंभिक परीक्षा हेतु 11 महीने (7+4) का आधारभूत कक्षा कार्यक्रम (Basic to Advance Level)
- ★ सामान्य अध्ययन के संपूर्ण पाठ्यक्रम पर अद्यतन पाठ्य सामग्री विश्लेषणात्मक एवं बिंदुवार नोट्स के रूप में
- ★ समसामयिक घटनाक्रम के प्रत्येक विषय खंड पर संबंधित विषय विशेषज्ञों द्वारा पाक्षिक कक्षा (अद्यतन नोट्स के साथ)
- ★ सार्वजनिक जीवन से जुड़े प्रसिद्ध व्यक्तियों द्वारा समय-समय पर अतिथि व्याख्यान
- ★ जटिल विषयों की बोधगम्य व सरल प्रस्तुति हेतु ऑडियो-विजुअल माध्यमों का प्रयोग
- ★ प्रत्येक अध्याय की समाप्ति पर विगत वर्षों की मुख्य व प्रारंभिक परीक्षा के प्रश्नों पर चर्चा एवं उत्तर प्रारूप की प्रिंटेड कॉपी
- ★ साप्ताहिक जाँच परीक्षा एवं उस पर चर्चा

नया बैच : जून प्रथम सप्ताह

लोक प्रशासन (हिन्दी माध्यम) का सर्वोच्च संस्थान -

सर्वोच्च अंक (गिरिवर दयाल सिंह)	सर्वोच्च अंक (मिहिर रायका)
390	**370**
(183/207)	**(179/191)**

आप भी प्राप्त कर सकते हैं 400+ अंक, कैसे? Winning Strategy के साथ

New Batch

31 May (Morning) & **07 June** (Evening)

Admission Open : 3rd May - 15th May

'अतुल लोहिया'

शिक्षक; मार्गदर्शक और मित्र भी

DOUBTLESS KNOWLEDGE, DESIRELESS SERVICE

प्रा

"PRABHA"

AN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION

105, VIRAT BHAWAN (MTNL BLDG.), NEAR BATRA CINEMA, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009

Phone : 27653498, 27655134. Cell.: 9810651005, 8010282492

YH-22/2012

पर्यावरण, विकास एवं आपदा : पंचतत्व संतुलन

● संतोष कुमार

जलवायु परिवर्तन 21वीं सदी की सबसे जटिल चुनौतियों में से एक है। इसके प्रभाव से कोई देश अछूता नहीं है। जलवायु परिवर्तन से जुड़ी चुनौतियों से कोई देश अकेले नहीं निपट सकता। जलवायु परिवर्तन का विकास, आपदा और निर्धनता से निकट का संबंध है। सतत और समावेशी विकास में इसकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। भारत में इन मुद्दों के समाधान और निराकरण के लिए संस्थागत व्यवस्थाओं, नीतियों और कानूनों के बारे में जो प्रश्न समय-समय पर उठते रहे हैं प्रस्तुत आलेख में उनके उत्तर देने का प्रयास किया गया है।

मुद्दे

भारतीय अर्थव्यवस्था का तेज़ी से विकास हो रहा है। 2003 से ही इसकी विकासदर 7-8 प्रतिशत बनी हुई है। प्रयास 8 से 9 प्रतिशत, बल्कि उससे भी अधिक की विकास दर हासिल करने के हो रहे हैं। बेरोज़गारी और निर्धनता के विरुद्ध लड़ाई में सफलता के लिए उच्च विकासदर देश की मांग है। देश की एक अरब की जनसंख्या में क़रीब 35 करोड़ लोग ग़रीब हैं। विश्व के निर्धनों का यह 27 प्रतिशत है।

भारत की अर्थव्यवस्था के विकास में औद्योगिक क्षेत्र के उम्दा प्रदर्शन का महत्वपूर्ण योगदान है। इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी सहित समूचा विनिर्माण क्षेत्र, वस्त्रोद्योग, औषधि और प्राथमिक रसायन क्षेत्रों की प्रभावशाली प्रगति की वृद्धिदर में उल्लेखनीय भूमिका रही है। त्वरित आर्थिक विकास ने देश की उपभोग शैली को भी प्रभावित किया है। इस परिवर्तन का देश के पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों पर भी व्यापक प्रभाव पड़ा है। उच्च विकासदर के लिए इन पर बेतहाशा ज़ोर बढ़ा है। अतएव, भारत के स्थायी विकास के मार्ग की सबसे बड़ी चुनौती जनसंख्या घनत्व, संवेदनशील पारिस्थितिकी की चरम जलवायु और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भरता है। इस प्रकार आर्थिक और सामाजिक विकास के लक्ष्यों को सभी देशों में संपोषणीयता के लिहाज़ से परिभाषित किया जाना चाहिए, चाहे वे देश विकसित हों या अविकसित, बाज़ारोन्मुखी हों अथवा केंद्रीय तौर पर नियोजित।

मानवीय आवश्यकताओं और आकांक्षाओं का संतोष विकास का प्रमुख उद्देश्य है। देश के अधिकतर लोगों की रोटी, कपड़ा, मकान और रोज़गार की आवश्यकताएं पूरी नहीं हो रहीं और प्राथमिक आवश्यकताओं के आगे वे यदि बेहतर जीवन की अपेक्षा करते हैं तो उनका ऐसा सोचना उचित है। एक ऐसा संसार जिसमें निर्धनता और असमानता व्याप्त हो, वह पर्यावरणीय और अन्य संकटों के प्रति सदैव संवेदनशील बना रहेगा। संपोषणीय विकास की दरकार है कि सभी की बुनियादी ज़रूरतें पूरी हों और सभी की बेहतर जीवन की तमन्ना को पूरा करने का अवसर मिल सके।

पर्यावरण का क्षेत्र

शाब्दिक रूप से पर्यावरण का अभिप्राय है विकास अथवा लोगों की आर्थिक प्रगति को प्रभावित करने वाली बाह्य परिस्थितियां, पशु अथवा पौधे, जीवन अथवा कार्य की परिस्थितियां आदि। समय और स्थान विशेष में फैली परिस्थितियों का कुल योग पर्यावरण कहलाता है। समय के साथ-साथ पर्यावरण का दायरा बढ़ता और बदलता रहा है। आदिम युग में पर्यावरण में पृथ्वी की भूमि, वायु और जल तथा जैविक समुदाय शामिल हुआ करते थे। जैसे-जैसे समय बीतता गया इंसानों ने अपनी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक गतिविधियों से पर्यावरण के क्षेत्र को व्यापक बना दिया। पर्यावरण के चार हिस्से होते हैं जो निम्न हैं:

वातावरण (ऐटमॉस्फेयर)- वातावरण का अर्थ है पृथ्वी में फैली गैसों का संरक्षित कवच।

जल जगत (हाइड्रोस्फेयर)- जल जगत में सागर, समुद्र, झीलें, नदियां, झरने, तालाब, ध्रुवीय हिमशिखर, हिमनद और भूगर्भीय जल शामिल होता है।

शिला/अश्म जगत (लिथोस्फेयर)- लिथोस्फेयर ठोस धरती के बाह्य आवरण को कहते हैं। इसमें धरती की परत एवं मिट्टी में पाए जाने वाले खनिज, कार्बनिक पदार्थ, वायु और जल आते हैं।

जीव जगत (बायोस्फेयर)- जीव जगत जीवित जीव और पर्यावरण यानी वातावरण,

जल जगत और शिला जगत से उनकी अंतर्क्रियाओं के क्षेत्र की ओर इंगित करता है।

पर्यावरण अध्ययन का अर्थ है- प्रदूषण के अंधाधुंध विमोचन से बचाव और संरक्षण के महत्व को समझना। आजकल पर्यावरण मुद्दे दिन-ब-दिन कठिन और जटिल होते जा रहे हैं और पृथ्वी पर मानवमात्र के अस्तित्व के लिए ख़तरा बनते जा रहे हैं। यह एक व्यावहारिक विज्ञान है क्योंकि इसमें मानवीय सभ्यता को पृथ्वी के सीमित संसाधनों के प्रति उत्तरदायी और निर्भर बनाने के व्यावहारिक उत्तर ढूंढे जाते हैं।

स्थिति

भारत अभी भी एक विकासशील देश ही है और अन्य अनेक देशों की तरह यह भी अनेक पर्यावरणीय मुद्दों में अटका हुआ है। निर्धनता चिंता का एक प्रमुख क्षेत्र बना हुआ है और अपर्याप्त साफ़-सफ़ाई तथा स्वच्छ पेयजल सहित अनेक समस्याएं परेशानी का सबब बनी हुई हैं। जनसंख्या की उच्च वृद्धिदर प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण तथा निर्वनीकरण करती जा रही है। दूसरी ओर, आर्थिक विकास और तकनीकी तरक्क़ी भी प्राकृतिक संसाधनों का भीषण दोहन कर रहे हैं, जिसका नतीजा यह हुआ है कि वायु, जल और नाभिकीय प्रदूषण बढ़ गया है। भारत सरकार प्रमुख पर्यावरणीय मुद्दों पर ध्यान दे रही है और इस चिंताजनक स्थिति से निपटने के लिए अनेक पर्यावरणीय नीतियां बना रही है। परंतु उनको सही मायनों में चरितार्थ करने के लिए अभी काफी कुछ करना होगा।

प्रमुख पर्यावरणीय समस्याएं हैं- जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक आपदाएं, मिट्टी और भूमि की दुर्गति, जैव विविधता का ह्रास, वायु एवं जल प्रदूषण। ये सभी जीवंत पर्यावरण के संतुलन को विचलित कर रहे हैं। यह अनुभव रहा है कि मानव का शांतिपूर्ण अस्तित्व अब एक दिवास्वप्नभर रह गया है। आपदाओं का संभावित परिदृश्य हमारे अस्तित्व और धरती मां के लिए ख़तरे की लटकती तलवार बन गया है। यह इसलिए हो रहा है कि हम पंचतत्व- वायु, जल, पृथ्वी, अग्नि और भूमि के बीच सहअस्तित्व और संतुलन की कुंजी को खो चुके हैं। यदि पंचतत्व के बीच संतुलन या साम्यावस्था नहीं रहेगी तो हमारा अस्तित्व ख़तरे में पड़ जाएगा। पंचतत्व में कुछ परिवर्तनों/विचलन के कारण ही प्राकृतिक आपदाएं घट रही हैं। पिछले पंद्रह वर्षों में चक्रवात, बाढ़, सूखा, बर्फ़ीले तूफान, गर्म और शीतलहरों की आवृत्ति और उग्रता काफी बढ़ गई है। यह केवल भारत में ही नहीं वरन पूरे विश्व में हो रहा है।

बढ़ता विरोधाभास

तीस वर्ष पूर्व आधी दुनिया घोर ग़रीबी में रहती थी। डेढ़ अमरीकी डॉलर प्रतिदिन की आय के ग़रीबों की संख्या पहले से आधी रह गई है। तकनीकी आविष्कार और संस्थागत सुधारों के कारण प्रगति के बावजूद विशेषकर मध्यम आय वाले देशों में लोगों की आवश्यकताएं काफी बढ़ गई हैं। अनेक देशों में प्रतिव्यक्ति आय पहले से दोगुनी हो गई है, फिर भी भूखे लोगों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि हो रही है। वर्ष 2010 में ऐसे लोगों की संख्या एक अरब से ऊपर चली गई थी। इतने लोगों के भूख और ग़रीबी से ग्रस्त होने के कारण आर्थिक विकास और ग़रीबी मिटाना विकासशील देशों की पहली प्राथमिकता बनी हुई है। भारत भी इन्हीं देशों में से एक है।

जलवायु परिवर्तन के कारण यह चुनौती और भी जटिल हो गई है। जलवायु परिवर्तन का प्रभाव, पहले से ही बाढ़, सूखा, तूफान और तेज़ गर्म एवं शीतलहरों के रूप में दिखाई दे रहा है। इससे लोगों, उद्योगों और सरकार को भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ रही है। संसाधनों के विकास का उचित उपयोग नहीं हो पाता। दूसरे, वर्तमान में जलवायु परिवर्तन की जो स्थिति है, उससे विकास के प्रति चुनौतियां बढ़ जाएंगी। शताब्दी के अंत तक तापमान में 5 डिग्री सेल्सियस या उससे भी अधिक की वृद्धि हो सकती है। हमारे बढ़िया से बढ़िया उपाय भी 2 डिग्री सेल्सियस से कम पर तापमान को स्थिर नहीं कर सकते। अतएव हमारे सामने सबसे बड़ी चुनौती विकास की आवश्यकताओं और जलवायु परिवर्तन के बीच संतुलन बनाए रखना है।

समशीतोष्ण पर्वतीय क्षेत्र के जलवायु की परिस्थितियों का प्रयोगशाला में अध्ययन से पता चलता है कि यदि तपन की उष्मा ऐसी ही बनी रही तो उसके भी वही परिणाम हो सकते हैं। जलवायु परिवर्तन के सीमित दायरे में रहने वाली प्रजातियों और पर्या-प्रणालियां लुप्त हो सकती हैं, हिमनदों के दायरे और आकार तथा अत्यंत ठंडे क्षेत्रों की धरती की बर्फ़ से जमी ऊपरी परत और मौसमी बर्फ़ की चादर में कमी आ सकती है। इससे मिट्टी की स्थिरता और सामाजिक-आर्थिक गतिविधियां प्रभावित होंगी। कृषि, पर्यटन, जलविद्युत और अन्य संबंधित गतिविधियों पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। स्थानीय लोगों के संसाधन और मनोरंजन गतिविधियां भी बाधित होंगी।

इन परिवर्तनों का प्राकृतिक वातावरण के साथ-साथ मानवीय समाजों और अर्थव्यवस्थाओं पर व्यापक प्रभाव पड़ेगा। वैज्ञानिकों ने विभिन्न सामाजिक-आर्थिक क्षेत्रों पर संभावित प्रत्यक्ष प्रभाव के बारे में अनुमान लगाया है, परंतु यथार्थ में परिणाम और भी जटिल हो सकते हैं क्योंकि एक क्षेत्र पर पड़ने वाला प्रभाव अन्य क्षेत्रों को परोक्ष रूप से प्रभावित कर सकता है। संभावित प्रभाव का अध्ययन करने के लिए जलवायु परिवर्तन के आकार और महत्व का अनुमान लगाना आवश्यक है। यद्यपि जलवायु प्रणाली और जलवायु परिवर्तन के अध्ययन के क्षेत्र में काफी प्रगति हुई है तथापि जलवायु परिवर्तन और उसके प्रभाव के पूर्वानुमानों के बारे में क्षेत्रीय और स्थानीय स्तर पर अनिश्चितता बनी रहेगी।

पानी पर दबाव कई गुना बढ़ जाएगा। पानी न केवल अस्तित्व के लिए आवश्यक है वरन खाद्य उत्पादन में पोषक तत्वों के बराबर या उससे भी अधिक महत्वपूर्ण है। कुल जल उपभोग का 70 प्रतिशत कृषि कार्यों में होता है। कुछ लोगों का अनुमान है कि 85 प्रतिशत पानी कृषि के काम आता है। वर्ष 2025 तक पानी के अभाव से 1 अरब 80 करोड़ लोग प्रभावित होंगे (विश्व स्वास्थ्य संगठन, 2007)। इससे स्वास्थ्य पर, विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में, भारी प्रभाव पड़ेगा। किसानों पर भी विपरीत प्रभाव पड़ेगा। उन ग़रीब देशों में जिनकी जनसंख्या में तेज़ी से वृद्धि हो रही है, भूजल के गिरते स्तर और पानी के अभाव से उपजी खाद्य असुरक्षा एक विकट स्वरूप ग्रहण करती जा रही है। पानी के कृषि, औद्योगिक और शहरी उपभोग के परे एक बड़ी समस्या यह भी है कि जलाशयों और प्राकृतिक जल स्रोतों का तेज़ी से क्षरण

हो रहा है। ये जलाशय और दलदली भूमि बाढ़ से बचाव करते हैं।

नीति, साधन, संस्थाएं और चुनौतियां

उच्च विकास, उच्च कार्बन विश्व और अल्प विकास, अल्प कार्बन विश्व के बीच जलवायु परिवर्तन और पर्यावरण संरक्षण की नीति कोई सरल विकल्प नहीं है। एक सीधा-सा प्रश्न है कि विकास चाहिए या पृथ्वी की सुरक्षा।

प्रदूषण

विकास के साथ-साथ पानी, वायु और भूमि का प्रदूषण भी तेज़ी से बढ़ रहा है। केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड की सूची में शामिल 17 सबसे अधिक प्रदूषणकारी उद्योगों वाले विनिर्माण क्षेत्र में भारी निवेश ने इसे और हवा दी है। पिछले दशक में भारत के निर्यात में सर्वाधिक प्रदूषणकारी क्षेत्र का अंश नाटकीय ढंग से बढ़ा है। इससे यह संकेत जाता है कि प्रदूषणकारी उद्योगों में निर्मित वस्तुओं के निर्यात के मामले में भारत तेज़ी से उभर रहा है। इससे यह पता चलता है कि पर्यावरण प्रबंधन में और अधिक निवेश की आवश्यकता है।

प्राकृतिक संसाधन, पर्या-प्रणालियां और जैव विविधता

ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता संसाधनों के ह्रास- ख़राब मिट्टी, कम होते जल स्रोत, बिगड़े वन के साथ बुरी तरह गुंथी हुई है। दूसरे शब्दों में, ग़रीबों को आजीविका के लिए इन सीमित संसाधनों के खनन और आवश्यकता से अधिक उपभोग के लिए विवश होना पड़ता है। इसका नतीज़ा यह होता है कि दरिद्रता और पर्यावरण के बीच गिरावट का घुमावदार खेल शुरू हो जाता है। देश के विशाल जैव विविधता वाले क्षेत्रों के बेहतर संरक्षण का दबाव बढ़ता जा रहा है। इन प्राकृतिक संसाधनों में अधिक निवेश से ग़रीबी उन्मूलन और विकास की संपोषणीयता का दोहरा लाभ होगा।

तटीय क्षेत्र प्रबंधन

भारत का तटवर्ती क्षेत्र भंगुर पर्या-प्रणालियों से भरा पड़ा है। दलदली भूमि, मूंगे की शैलभित्तियां, नदी मुख, समुद्री ताल (लैगून) और अनूठे समुद्री तथा स्थलजीवी वन्य जीवों से तटीय क्षेत्र भरा पड़ा है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में इनका भारी योगदान है। शहरी क्षेत्रों में तेज़ी से हो रहे औद्योगीकरण, समुद्री परिवहन, समुद्र में मछली पकड़ने, पर्यटन, तटवर्ती और समुद्र की तलहटी में खनन, सागर में तेल और प्राकृतिक गैस का उत्पादन तथा जलकृषि (जल जीवों का उत्पादन और व्यवसाय) जैसी आर्थिक गतिविधियों से इन क्षेत्रों के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन बढ़ा है। ये गतिविधियां जहां अर्थव्यवस्था में योगदान कर रही हैं, वहीं तटवर्ती विकास और आजीविका पर भीषण मौसम का दबाव भी बढ़ रहा है। लोगों के जीवन और संपत्ति पर इसका घातक प्रभाव पड़ने की संभावना भी बढ़ती जा रही है। ग़रीब और कमज़ोर वर्गों पर इनका कुछ अधिक ही असर देखा जा रहा है।

पर्यावरणीय प्रशासन

बारहवीं पंचवर्षीय योजना में मूलभूत ढांचे के क्षेत्र में निवेश बढ़कर 5 खरब डॉलर तक पहुंच जाने की बात कही गई है। इस तेज़ी से बढ़ते निवेश के लिए निर्णय लेने की प्रक्रिया में एकीकृत और समन्वित दृष्टिकोण की आवश्यकता है। टुकड़ों-टुकड़ों में अपनाई जाने वाली नीतियों और अलग-अलग संस्थागत, वैधानिक और आर्थिक नियोजन के पैमानों के कारण यह काम और चुनौतीपूर्ण हो जाता है। इन सबका नज़रिया और उद्देश्य प्राय: परस्पर विरोधी होता है।

पर्यावरणीय स्वास्थ्य

प्रदूषण से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव की तुलना कुपोषण से होने वाले प्रभाव से की जा सकती है। इसका उत्पादकता, स्वास्थ्य और जीवन की गुणवत्ता पर काफी प्रभाव पड़ता है। स्वच्छ पेयजल और स्वच्छता का अभाव, घर के भीतर वायु की दूषित गुणवत्ता का निर्धनताजनित ख़तरों से सीधा संबंध होता है। सतही जल के प्रदूषण और जीवाणुओं के प्रसार में तेज़ शहरीकरण और सघन कृषि का बड़ा योगदान है। पिछले कुछ वर्षों में जलापूर्ति और स्वच्छता के क्षेत्र में उल्लेखनीय सुधार होने के बावजूद जलजनित बीमारियां अभी भी तमाम बच्चों की अकाल मृत्यु का कारण बनी हुई हैं।

जलवायु परिवर्तन

निर्धनता के ऊंचे स्तर, जनसंख्या घनत्व, प्राकृतिक संसाधनों पर अत्यधिक निर्भरता और पहले से ही दबाव झेल रहे पर्यावरण के मिले-जुले कारणों से भारत जलवायु परिवर्तन के ख़तरे के प्रति संवेदनशील बना हुआ है। शताब्दी के मध्य तक भारत के औसत तापमान में 1.1 से 2.3 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि होने की आशंका जताई जा रही है। कृषि संबंधी जलवायु में और भी हानिकारक परिवर्तन होने की संभावना है। इन सबसे भारत के जीडीपी (सकल घरेलू उत्पाद) में क़रीब 5 प्रतिशत की कमी आ सकती है, जोकि अंतरराष्ट्रीय औसत से अधिक होगा। इसी प्रकार वर्षा में भी उतार-चढ़ाव हो सकता है। इससे बाढ़, सूखा और चक्रवात की आवृत्ति का ख़तरा बढ़ जाएगा।

अर्थव्यवस्था और जनसंख्या के आकार के लिहाज़ से ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जक देशों की सूची में भारत का स्थान विश्व में छठे स्थान पर आता है। परंतु ऐसे अनेक उपाय हैं, जिनसे भारत को अल्प कार्बन अर्थव्यवस्था वाले देश की श्रेणी में रखा जा सकता है। ये हैं- प्रति यूनिट जीडीपी अल्प उत्सर्जन (विश्व औसत के बराबर) दूसरा, विश्व में सबसे कम प्रतिव्यक्ति उत्सर्जन (विकसित देशों के औसत का 10 प्रतिशत) और वन क्षेत्र, जो स्थायी रूप ले चुका है। परंतु सतत आर्थिक विकास के कारण भारत के उत्सर्जन में काफी वृद्धि होने की आशंका है।

आपदा ज़ोखिम प्रबंधन और तैयारियां

देश में आपदाओं की बढ़ती घटनाओं को देखते हुए सरकार ने राहत और बचाव के दृष्टिकोण में आमूल बदलाव किया है। दुर्घटना के बाद उठाए जाने वाले क़दमों की अपेक्षा आपदाओं से बचने और निपटने के उपायों पर अधिक ज़ोर दिया जा रहा है। राष्ट्रीय राज्य और जिला स्तर पर नये संस्थागत प्रबंध किए गए हैं। राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन अधिनियम, 2005 के अनुसरण में सरकार ने राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण, राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान और राष्ट्रीय आपदा अनुक्रिया बल का गठन किया है। राज्यों और जिला स्तर पर भी इसी प्रकार की व्यवस्था की गई है।

पर्यावरण संबंधी चुनौतियों से समेकित और व्यापक रूप से निपटने के लिए भारत में कड़ा पर्यावरण कानून बनाया गया है। कानून के अनुपालन और निगरानी के लिए संस्थाएं बनाई गई हैं। राष्ट्रीय पर्यावरण नीति में बाज़ार

की ताक़तों के मूल्य को स्वीकार किया गया है और उसमें नियामक उपायों के साथ ही प्रोत्साहन का समावेश भी किया गया है। पर्यावरण संबंधी मुकदमों की सुनवाई के लिए हरित न्यायाधिकरण भी गठित किया गया है।

विकास, पर्यावरण ह्रास का प्रभाव, जलवायु परिवर्तन और आपदा ज़ोखिम प्रबंधन अब कोई पृथक विषय नहीं रहे हैं। संपोषणीय विकास के ढांचे में ये समग्र रूप से जुड़ चुके हैं।

पर्यावरण और वन मंत्रालय तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु कुछ कानून

पर्यावरण संरक्षण और वन प्रबंधन के लिए उत्तरदायी भारत सरकार के पर्यावरण एवं वन मंत्रालय ने अनेक कानून बनाए हैं। जल संरक्षण के लिए 1974 में जल अधिनियम बनाया गया। वायु (प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण) अधिनियम 1981 में पारित हुआ जिसमें 1987 में कुछ महत्वपूर्ण संशोधन किए गए। पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम 1986 में बना, जिसका उद्देश्य पर्यावरण का संरक्षण और सुधार था। इसमें पिछला संशोधन 1991 में किया गया। संयुक्त राष्ट्र जैविक विविधता सम्मेलन (सीबीडी), 1992 के उद्देश्यों को प्राप्त करने की गरज से 2002 में जैविक विविधता अधिनियम पारित किया गया। इसका उद्देश्य जहां जैव विविधता की रक्षा करना है वहीं उससे संबंधित ज्ञान का वैज्ञानिक और सुविचारित ढंग से प्रसार करना है।

देश के वनों की रक्षा के इरादे से 1980 में वन संरक्षण अधिनियम बनाया गया। वन क्षेत्र के उपयोग और वनों के संरक्षण के लिए इस कानून का कड़ाई से पालन किया जाता है। वन्य जीवों के संरक्षण के लिए 1972 में एक कानून बनाया गया था। इससे वन्य जीवों के अवैध शिकार और व्यापार पर सख़्ती से रोक लगाया जा सका है। केंद्र सरकार ने घातक पदार्थों के कारोबार के दौरान दुर्घटनाओं से होने वाली क्षति के मुआवज़े आदि के लिए राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण गठित करने के वास्ते 1995 में एक कानून बनाया। कतिपय प्रतिबंधित क्षेत्रों में पर्यावरण संबंधी स्वीकृति के मामलों को निपटाने के लिए 1997 में राष्ट्रीय पर्यावरण अपील प्राधिकरण का गठन करने वाला कानून पारित किया गया। मंत्रालय ने परियोजनाओं की स्वीकृति के लिए पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का मूल्यांकन अनिवार्य कर दिया है।

निष्कर्ष

पर्यावरण, विकास, जलवायु परिवर्तन और आपदाओं के ज़ोखिम से संबंधित मुद्दे पंचतत्व में असंतुलन के कारण उभर रहे हैं। अनियोजित मानवीय हस्तक्षेप इसका प्रमुख कारण है। पर्यावरण के प्रति ख़तरा अब काफी बढ़ गया है। पर्यावरण के प्रति बढ़ते ख़तरे से कमज़ोर और ग़रीब वर्गों की स्थिति और भी जटिल हो गई है। इस परिस्थिति में पर्यावरण पर समग्र रूप से विचार करने की आवश्यकता है। इस समस्या का समाधान एक समेकित सोच और दृष्टिकोण से ही निकल सकता है। राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय सभी हितग्राहियों को मिल कर पर्यावरण नीतियों और कार्यक्रमों का उचित ढंग से कार्यान्वयन करना होगा, ताकि पंचतत्व में आए असंतुलन को दूर किया जा सके और पर्यावरण का वरदहस्त मानवमात्र पर बना रहे। ❑

(लेखक राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन संस्थान के नीति, नियोजन एवं क्रास कटिंग मुद्दे विभाग में प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष हैं।
ई-मेल : profsantosh.nidim@gmail.com)

सदस्यता कूपन

नयी सदस्यता / नवीकरण / पता बदलने के लिए (जो लागू होता हो उस पर '✓' का चिह्न लगाएं।)

मैं ..... (पत्रिका का नाम एवं भाषा) का ❑ वार्षिक (100 रुपये) ❑ द्विवार्षिक (180 रुपये)

❑ त्रिवार्षिक (250 रुपये) सदस्य बनने का इच्छुक हूं। डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर संख्या ..... तारीख .....

नाम .....

वर्ग ❑ विद्यार्थी ❑ शिक्षक ❑ संस्था ❑ अन्य

पता :.....

.....

पिन .....

नवीकरण/पता बदलने के लिए कृपया अपनी सदस्य संख्या यहां लिखें :.....

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर/मनीआर्डर ***निदेशक, प्रकाशन विभाग*** के नाम से बनवाएं और कूपन के साथ इस पते पर भेजें :

व्यापार व्यवस्थापक (प्रसार) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड-IV, सातवां तल, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

विकास की साझी परंपरा

● सुभाष शर्मा

भारत में प्राकृतिक संसाधनों की विपुलता एक ऐतिहासिक तथ्य है। प्रारंभ से ही नगर और ग्राम बसावट के प्रतीक थे जबकि वन एकांत के प्रतीक थे जहां ऋषि-मुनि तपस्या करते थे, वहां जंगली जानवर भी रहते थे। मगर ग्राम एवं नगर बनाम अरण्य का द्वैध समय-समय पर बदलता रहा है और दोनों एक-दूसरे के पूरक भी रहे क्योंकि दैनिक जीवन में तमाम उपयोगी चीज़ें लोगों को वनों से ही मिलती रही हैं। इमारती लकड़ी, ईंधन की लकड़ी, फल-फूल, कंदमूल, औषधियां, खाद, रस्सी बनाने के लिए छालें और घासें, पशुओं के लिए चारा, कृषि औजार बनाने की लकड़ी आदि। गांव के श्रमिक वर्ग से नगर के राजा-महाराजा तक जंगली जानवरों का शिकार वनों में किया करते थे। कुछ पेट की भूख मिटाने के लिए तो कुछ अपनी शौक पूरी करने के लिए, कुछ खेल-खेल में निशाना लगाने का अभ्यास पूरा करने के लिए। इस प्रकार प्राचीन भारत में वन का आशय चार प्रकार की गतिविधियों के स्थल के रूप में था- शिकार करना, जीवनोपयोगी चीज़ों का संग्रह करना, आश्रम में तपस्या करना और वनवास करना। चीनी यात्री ह्वेनसांग ने कौशाम्बी, कपिलवस्तु और कुशीनगर में सघन वनों के होने का उल्लेख अपने संस्मरण में किया था। *शतपथ ब्राह्मण* के अनुसार सरस्वती और सदानीरा (गंडक) के बीच सघन वन थे तथा नगर बसाने हेतु जंगलों को जलाया गया था। बाणभट्ट ने *हर्षचरित* में विंध्य में अच्छा वन होने की चर्चा की है। वहां सहारा आदिवासी रहते थे। अशोक महान के शासनकाल में मानव बसावटों की सुरक्षा और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण की पूरी व्यवस्था की गई थी। वनों के जलाने पर पूर्ण प्रतिबंध लगा दिया गया था। इसके तीन कारण थे : पहला, तब तक कृषि-उत्पादन का स्थायी चरण पूरा हो गया था। दूसरा, इमारती लकड़ी जंगल से ले जाने पर कर चुकाना पड़ता था और इसलिए जंगल जलाने से राजस्व की हानि होती। तीसरा, जंगल से शिकारियों को भोजन मिलता था और इसलिए जंगल जलाने से उनकी जीविका का साधन खत्म हो जाता। *अर्थशास्त्र* में कौटिल्य ने लिखा है कि वनोपज के निदेशक के पर्यवेक्षण में वनों के विनाश को रोकने हेतु सुरक्षाकर्मियों की नियुक्ति की जाए। इस प्रकार भारतीय इतिहास में वन तथा वहां रहने वालों के बारे में कई प्रकार के परिप्रेक्ष्य रहे हैं।

मोटे तौर पर कहा जा सकता है कि आधुनिकता की अवधारणा औद्योगीकरण पर आधारित है जिसमें प्राकृतिक संसाधनों का अधिकतम शोषण व्यक्तिगत लाभ की प्राप्ति हेतु किया जाता है। दूसरी ओर, पारंपरिक समाजों में प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग मितव्ययी और टिकाऊ तरीक़े से किया जाता रहा है। निस्संदेह, तमाम आदिवासी लोग वनों में सदियों से सह-अस्तित्व कायम किए हुए हैं और वन संरक्षण की तमाम कम ख़र्चीली एवं टिकाऊ पद्धतियां अपनाते रहे हैं जिससे उनकी अगली पीढ़ी प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से वंचित न हो जाए। ये आदिवासी समुदाय अपनी नयी पीढ़ियों को वन संरक्षण संबंधी देशज ज्ञान, पद्धति, तकनीकी आदि हस्तांतरित करते रहे हैं, उन्होंने कई नियम बनाए हैं कि कब पशुओं को जंगल में चरने के लिए छोड़ा जाए और कब नहीं, प्रकृति के नाना रूपों की कब पूजा की जाती है, कब प्रकृति और कृषि संबंधी त्योहार मनाए जाते हैं, कब किन-किन जंगली जानवरों का शिकार किया जाता है, कब और कौन-कौन से ईंधन इकट्ठा किए जाते हैं, कब कौन-सा फल या वनोपज इकट्ठा किया जाता है। इसलिए भारत की नौंवी पंचवर्षीय योजना के दृष्टिपत्र (1997) में यह स्पष्टत: लिखा गया है कि वनों के प्रबंधन में स्थानीय आदिवासी समुदायों को पूरी तरह शामिल किया जाएगा। मगर ब्रिटिश औपनिवेशिक शासनकाल में तथाकथित आधुनिकीकरण की शक्तियों ने निम्नलिखित तरीक़े से भारत में जल, जंगल, ज़मीन का अंधाधुंध शोषण किया :

- रेलगाड़ियों के स्लीपर के लिए जंगलों की अंधाधुंध कटाई की गई।
- विभिन्न उद्योगों तथा प्रतिरक्षा के लिए वनों की कटाई तेज़ गति से और बार-बार की गई।
- नदियों को बांधने की प्रवृत्ति तेज़ी से शुरू हुई।
- ज़मीन के निजीकरण को बढ़ावा दिया गया तथा अधिक से अधिक राजस्व की उगाही हेतु जमींदारी/तालुकदारी जैसी मध्यस्थता वाली पद्धति अपनाई गई। समय पर राजस्व न चुका पाने वाले किसानों की ज़मीन नीलाम कर दी गई। ज़मीन को निजी संपत्ति बनाकर बाज़ार में क्रय-विक्रय की चीज़ बना दी गई।
- पारंपरिक तरीक़े से जल एवं जंगल का संरक्षण करने वाले आदिवासियों को बर्बर और असभ्य मान लिया गया तथा उन्हें सभ्य बनाने के तमाम कृत्रिम उपाय किए जाने लगे। उदाहरणार्थ, दक्षिण भारत में नीलगिरि क्षेत्र में 1830 के दशक में

ब्रिटिश सरकार ने तोड़ा आदिवासी समुदाय को 'धर्म एवं सभ्यता' में शिक्षित करके सभ्य बनाने का प्रयास शुरू किया।

- जंगलों के संरक्षण का दायित्व शासन ने स्वयं ले लिया और उसमें नागरिकों को सहभागी नहीं बनाया गया तथा आदिवासियों और वनों के सहजीवी संबंध को सिरे से ख़ारिज कर दिया गया। सरकारी अधिकारी/कर्मचारी बनाम स्थानीय जनता ने अविश्वास एवं संघर्ष का रूप ले लिया। महाराष्ट्र में ब्रिटिश शासन के पूर्व महार लोग गांव की सामुदायिक भूमि एवं वनों की रखवाली करते थे, किंतु नये शासन ने यह व्यवस्था ख़त्म कर दी।
- वनों के संरक्षण की देशज पद्धतियों को परखे बगैर एक झटके में ख़ारिज कर तथाकथित 'वैज्ञानिक' पद्धतियों को लागू कर दिया गया जो दैनिक जीवन से कटी थीं, लोगों को दैनिक उपयोग की चीज़ें वनों से लेने की मनाही कर दी गई।
- स्थानीय प्रबंधन की जगह औपनिवेशिक ब्रिटिश अंतरराष्ट्रीय प्रबंधन ने ले ली। विकसित और औद्योगिक ब्रिटिश साम्राज्य की शक्ति को नये प्रबंधन का आधार बना दिया गया। 1904 में भारत में पांच लाख वर्ग किलोमीटर से अधिक वन क्षेत्रों को ब्रिटिश सरकार ने अपने कब्जे में ले लिया और उनका प्रबंधन सरकारी वनकर्मियों द्वारा होने लगा। 1860 में वन अधिनियम बनाया गया जिससे लोगों को वनोपज लेने के पारंपरिक अधिकार ख़त्म कर दिए गए। इन्हें आरक्षित वन घोषित कर दिया गया।
- ब्रिटिश शासनकाल में वनों को राजस्व का मुख्य स्रोत भी बना दिया गया।
- ब्रिटिश औपनिवेशिक नीति के ख़िलाफ़ किसानों, आदिवासियों एवं अन्य लोगों ने संघर्ष किया और खुलकर प्रदर्शन किया, कभी अपनी मांगों को सरकारी अधिकारियों के समक्ष पेश किया, कभी प्रतिबंधों को नकारते हुए वनोपज इकट्ठा कर लिया, कभी वनोपज की चोरी (कमज़ोरों के हथियार के रूप में) की आदि।
- नयी नीति का विरोध कुछ इलाक़ों में उग्र नकारात्मक रूप से हुआ। वनों को जला दिया गया अथवा थोक में पेड़ों को काट दिया गया।
- ब्रिटिश कानूनों के अलावा गजेटियरों, नियमों की पुस्तिकाओं, मैनुअल, सर्वेक्षणों, राजपत्रों, पाठ्यपुस्तकों आदि के प्रकाशन के जरिये मनोनुकूल इतिहास गढ़ा गया जो सर्वोच्च साम्राज्यवादी शासन का अभिन्न अंग था जिसके उद्देश्य बर्बरों को सभ्य बनाना, अलिखित परंपराओं की जगह लिखित कानून बनाना, अतीत को इतिहास में बदलना, राजस्व में वृद्धि करना, उद्योगों के लिए कच्चा माल तैयार करना (चंपारण में नील की खेती हेतु तिनकठिया पद्धति थोपना, रेल और कागज़ उद्योग के लिए पेड़ों को कटवाना, लगान बढ़ाना, भूमि को बाज़ार में लाना आदि)।
- जंगलों में स्थित खदानों पर भी ब्रिटिश शासन ने अधिकार जमा लिया।
- अंग्रेज़ों ने भूमि अधिग्रहण अधिनियम (1894) बनाया जिसके अनुसार निर्जन भूमि को 'सार्वजनिक उद्देश्य' हेतु लेने का अधिकार सरकार को मिला जिसे घोषित रूप से विकास का नाम दिया गया। बाद में कई संशोधनों के जरिये निजी कंपनियों, सहकारी आवासों, न्यासों आदि के लिए अंधाधुंध तरीक़े से बाज़ार दर से कम मुआवज़ा देकर किसानों की ज़मीनें अधिगृहीत की जाने लगीं। कब्ज़ा होने के बावजूद तमाम आदिवासी परिवार पर्याप्त साक्ष्य के अभाव में ज़मीन और मुआवज़ों से वंचित हो गए।

उल्लेखनीय है कि पश्चिमी पंजाब में, जो मुख्यत: विरल आबादी का इलाक़ा था, स्थायी कृषि के विकास हेतु कई बड़ी नहरें (चेनाब, झेलम और बड़ी दोआब आदि) 1892 से 1916 के दौरान निकाली गईं जिससे उन आठ नयी नहरों वाले जिले (शाहपुर, झांग, गुजरांवाला, मुल्तान, मोंटगोमरी, लाहौर, लायलपुर, शेखपुरा) से प्राप्त राजस्व पंजाब के शेष 21 जिलों से प्राप्त राजस्व से अधिक था। ब्रिटिश शासन काल के पूर्व कुओं की खुदाई, छोटे बांध और छोटी नहरें सिंचाई के लिए बनाई गई थीं। मगर इन बड़ी नहरों से कई समस्याएं पैदा हुईं। पहली, नाली की उचित व्यवस्था न होने से चेनाब के अंतिम छोर पर संचित वर्षा जल का निकलना कठिन हो गया। दूसरी, 1990 में चेनाब में नहर का किनारा काफी कट गया जिससे 12 दिनों तक नहर को बंद रखा गया और 22,000 लोगों को लगाकर तथा एक लाख रुपये ख़र्च कर इसकी मरम्मत की गई। तीसरी, उचित उपाय न होने से नहर में काफी गाद इकट्ठा हो गया। चौथी, जल जमाव की समस्या होने से काफी ज़मीन खेती के योग्य नहीं रह गई क्योंकि इसके साथ मिट्टी में लवणता की मात्रा (कल्लार) बढ़ गई। इसके कारण बीज अंकुरित नहीं होते। सिंचाई विभाग ने स्वीकार किया कि 1920-21 तथा 1933-34 के बीच 101.24 लाख रुपये जल जमाव दूर करने के लिए ख़र्च किए गए।

जंगली सियारों का बच्चों पर आक्रमण उत्तर प्रदेश और बिहार में ज्यादा होता था जबकि अन्य इलाक़ों में नगण्य। आबादी के बाद भी बाघ तथा अन्य वन्य जीवों का शिकार धड़ल्ले से होता रहा, वनों का विनाश विकास के नाम पर होता रहा और जंगलों को साफ़ कर कृषि क्षेत्र बढ़ाया जाता रहा। इसके फलस्वरूप बाघों के पर्यावास समाप्त हो गए। आज बाघों की कई प्रजातियां गंभीर संकट में हैं और उनका भविष्य अंधकारमय है। अस्तु, वर्ल्डवाइड फंड फॉर नेचर (डब्ल्यूडब्ल्यूएफ), जिसका मुख्यालय स्विटजरलैंड में है, की पहल और समर्थन पर 1973 में भारत में 'बाघ परियोजना' शुरू की गई, जिसमें नौ अभयारण्य शामिल किए गए और 1995 तक कुल 25 अभयारण्यों में 'बाघ परियोजना' चलाई गई जिसका ख़र्च केंद्र और राज्य सरकारों ने संयुक्त रूप से वहन किया। इस परियोजना के दो मुख्य आधार थे। पहला, प्रत्येक वयस्क बाघ को कम से कम दस वर्ग किमी शांत जंगल की ज़रूरत शिकार और प्रजनन के लिए होती है। दूसरा, प्रत्येक अभयारण्य कम से कम 300 बाघों का संरक्षण करे जिससे प्रजनन की सफलता और वंशानुगत विविधता सुनिश्चित हो। यद्यपि शुरू में प्रत्येक अभयारण्य के लिए 3,000 वर्ग किमी वन क्षेत्र देने का प्रस्ताव था मगर भारत जैसे सघन आबादी वाले देश में इतना वन क्षेत्र उपलब्ध नहीं हो सका और इन अभयारण्यों को 750 से 1,500 वर्ग किमी वनक्षेत्र ही (प्रत्येक की दर से) दिया जा सका। 1996 तक भारत में 75 राष्ट्रीय उद्यान और 421 आश्रयणी बनाए गए जिनका कुल क्षेत्रफल 32 लाख वर्ग किमी था और बाघ परियोजना का क्षेत्र इस कुल क्षेत्र का एक तिहाई था। उस वक्त तक सरकारी आंकड़ों के अनुसार पच्चीस हज़ार आदिवासियों और पारंपरिक वनवासियों को उक्त अभयारण्य क्षेत्रों से हटा दिया गया। गैर-सरकारी अनुमानों के अनुसार 80 लाख मूल निवासियों को बाघ परियोजना क्षेत्रों से विस्थापित किया गया। इसके पीछे सरकारी वन्य जीव संरक्षणवादियों का तर्क़ था कि बाघों

और मनुष्यों का सह-अस्तित्व नहीं हो सकता। इसके अलावा इस क्षेत्र से किसान/आदिवासियों को लघु वनोपज (मधु, जड़ी-बूटी, ईंधन, कृषि कार्य एवं गृह-निर्माण के लिए लकड़ी, फल-फूल, घास-पत्तियां) आदि लेने से मना कर दिया गया। धीरे-धीरे बाघों की संख्या बढ़ी मगर दुधवा राष्ट्रीय उद्यान में बाघों द्वारा कई आदमियों को मार डालने की घटनाएं घटीं। इसके कारण आस-पास के लोगों द्वारा बाघों को ज़हर देकर, जाल में फंसाकर, बिजली के तार छुआकर तथा गोली दागकर मार डाला गया। 1985-86 में 25 बाघ लखीमपुर खीरी में मारे गए। 1988 में फतेह सिंह राठौर (रणथम्भौर अभयारण्य के निदेशक) और बाल्मीकि थापर (स्वतंत्र फोटोग्राफर एवं वन संरक्षक) ने मिलकर रणथम्भौर प्रतिष्ठान गठित किया और पारिस्थितिकीय विकास का नया आयाम पेश किया जिसमें ग्रामीणों को रोज़गार, सामाजिक सेवा, शोध एवं पर्यटन से प्राप्त लाभ में हिस्सेदारी दी गई ताकि वे वन्यजीवों के प्रति शत्रुता का भाव छोड़ दें। मगर यह प्रतिष्ठान बाह्य सहायता पर निर्भर है। अस्तु, ऐसे वैकल्पिक प्रतिमान की ज़रूरत है जो भीतरी और स्थानीय ज्ञान पर आधारित हो, न कि बाहरी लोगों की विशेषज्ञता और धन पर। राजस्थान का दूसरा बाघ परियोजना क्षेत्र सरिस्का है (जो 800 किमी में फैला है) जहां से होकर दो राष्ट्रीय राजमार्ग गुज़रते हैं जिससे तमाम छोटे-बड़े वाहनों की आवाजाही से ध्वनि प्रदूषण होता है और प्रतिवर्ष सितंबर माह में वहां स्थित मंदिर में दो लाख श्रद्धालु आते हैं। फिर विदेशी सैलानी जीपों और मोटरसाइकिलों पर सवार होकर बाघ देखते हैं। इसके अलावा हज़ारों वन गूजर पिछले कुछ दशकों में वहां प्रवेश कर गए और स्थानीय वन गूजरों से घुल-मिल गए। वे हज़ारों जानवरों को जंगल में चराते हैं। इस प्रकार सरिस्का परियोजना कई समस्याओं से ग्रस्त है। यह आश्चर्य नहीं कि वहां बाघों की संख्या घट रही है। इसके लिए तस्कर, पुलिस, ठेकेदार आदि का अपवित्र गठबंधन जिम्मेदार है। वन गूजरों के अनुसार उनका रहन-सहन बाघों के संरक्षण के लिए निम्नलिखित तरह से सकारात्मक है :

- हम बाघों पर हमला नहीं करते, इसलिए बाघ हम पर हमला नहीं करते। दोनों एक-दूसरे का सम्मान करते हैं।
- हम उन वन्यजीवों को नहीं मारते जिन्हें बाघ अपना शिकार बनाते हैं। इस प्रकार बाघों के लिए पर्याप्त प्राकृतिक आहार उपलब्ध रहता है।
- हिंदुओं की मान्यता है कि बाघ दुर्गा मां की सवारी है, सो पूज्य है।
- बाघ अत्यंत सुंदर होता है और बाघों के कारण भैंसे प्राय: बीमार नहीं होतीं। बाघ की सांसें भैंसों के स्वास्थ्य के लिए लाभदायक हैं।

भारत में साझी संपदा के संसाधनों का स्वर्णिम इतिहास रहा है। विभिन्न गांवों में सामूहिक रूप से तालाबों, खलिहानों, नालों, कच्चे बांधों, बगीचों, नदियों, झरनों, जंगलों, श्मशानों, चौपालों आदि का उपयोग कतिपय नियमों के आधार पर होता रहा है। 1980 के दशक में एन.एस. जोधा द्वारा छह शुष्क उष्णकटिबंधीय राज्यों के 20 जिलों के 80 गांवों में किए गए शोध में कई निम्न महत्वपूर्ण तथ्य पाए गए :

- 1950 में हुए भूमि सुधारों के पूर्व पर्यावरण की दृष्टि से अस्थिर गांवों में साझी संपदा के संसाधनों का क्षेत्र कुल क्षेत्रफल का 39 प्रतिशत से 58 प्रतिशत था जबकि पर्यावरण की दृष्टि से स्थिर गांवों में यह 15 प्रतिशत से 23 प्रतिशत था। इस प्रकार साझी संपदा के संसाधन ज़ोखिमों का सामूहिक रूप से वहन करते रहे हैं।
- साझी संपदा के संसाधनों से ग़रीब परिवारों को ज्यादा लाभ होता रहा है क्योंकि दैनिक उपयोग की चीज़ों की आपूर्ति के लिए उनके पास निजी स्रोत नहीं थे। उदाहरणार्थ, ग़रीबों को 66 से 34 प्रतिशत तक ईंधन, 66 से 84 प्रतिशत तक पशुओं की चराई, साल में 128 से 196 दिनों तक रोज़गार, और प्रति परिवार ₹ 534 से ₹ 774 तक वार्षिक आमद साझी संपदा के संसाधनों से होती है अर्थात अधिकतर ग़रीबों की आय का 20 प्रतिशत इनसे प्राप्त होता है। इससे आर्थिक विषमता कम होती है।
- अमीर लोग साझी संपदा के संसाधनों को अपने निजी स्वामित्व में लेना चाहते हैं और ले लेते हैं। विशेषकर ज़मीन का अतिक्रमण। धीरे-धीरे छोटे पैमाने पर ग़रीब लोग भी इनका अतिक्रमण कर रहे हैं।
- 1950 के दशक से 1980 के दशक तक साझी संपदा के संसाधनों का क्षेत्र 3 से 55 प्रतिशत तक कम हो गया। इस प्रकार ज्यादा लोगों द्वारा कम क्षेत्र का दोहन करने से भौतिक अवक्रमण हुआ और उत्पादकता घट गई।
- भौतिक अवक्रमण का एक कारण साझी संपदा की देखरेख के पारंपरिक तरीक़ों की उपेक्षा करना भी था। 90 प्रतिशत से अधिक गांव उपयोग के नियमों को लागू नहीं करते और न कोई चुंगी या कर ही लगाते हैं। 80 प्रतिशत से अधिक गांव उपयोग के दायित्वों को नहीं निभाते। ऐसा राज्य के हस्तक्षेप के कारण समुदाय की शक्तियों का क्षरण होने के फलस्वरूप हुआ।
- 1950 के दशक में साझी संपदा के संसाधनों से 27 से 46 प्रकार के उत्पाद प्राप्त होते थे जो 1980 के दशक में घटकर 8 से 22 तक सीमित हो गए। इसके अलावा इन उत्पादों की मात्रा और गुणवत्ता में काफी कमी आई।
- साझी संपदा के घटते महत्व के लिए बाज़ार, नयी तकनीकी, राज्यों का हस्तक्षेप, निजीकरण, लोगों के रुख में बदलाव आदि जिम्मेदार हैं। पहले लोग खेती के तमाम कार्य सामूहिक रूप से निपटाते थे मगर आजकल निजी तौर पर निपटाते हैं। उदाहरणार्थ, 1950 के दशक में 76 से 84 प्रतिशत तक खेतिहर परिवारों ने साझी संपदा के संसाधनों का उपयोग कृषि निवेश के रूप में किया था जो 1980 के दशक में घटकर 18 से 22 प्रतिशत हो गया।
- साझी संपदा के संसाधनों के पर्यावरणीय आयामों और वर्तमान विकास के प्रतिमानों के बीच काफी टकराव है और दुर्भाग्यवश नीति-निर्धारकों से लेकर स्थानीय ग्राम समुदाय तक विकास के प्रतिमानों को ज्यादा तरज़ीह देते हैं।

इस प्रकार साझी संपदा के संसाधन सिर्फ़ भौतिक वस्तुएं नहीं हैं बल्कि जीविका और सेहत के ज़रूरी स्रोत हैं। वास्तव में, ये संपत्ति के सामाजिक संबंध के पर्याय हैं। भारत में तीन मुख्य क्षेत्र हैं : शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र, पहाड़ी क्षेत्र और वनाच्छादित आदिवासी क्षेत्र। पहाड़ी और वनाच्छादित आदिवासी इलाक़ों में साझी संपदा के संसाधनों पर ज्यादा लोग, ज्यादा विस्तृत क्षेत्र में, ज्यादा चीज़ों के लिए और ज्यादा समय तक निर्भर रहते हैं। दूसरी ओर शुष्क और अर्धशुष्क इलाक़ों में (जहां कृषि की संभावना ज्यादा होती है) अपेक्षाकृत कम लोग, कम चीज़ों के लिए और कम समय तक साझी संपदा के संसाधनों पर निर्भर रहते हैं। राष्ट्रीय नमूना

सर्वेक्षण की रपट सं. 452 के अनुसार, पूरे देश के कुल भू-भाग का 15 प्रतिशत हिस्सा साझी संपदा (भूमि संसाधन) के रूप में पाया गया जिसमें प्रति परिवार हिस्सा 0.31 हेक्टेयर पाया गया। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण (1999) के अनुसार 48 प्रतिशत परिवार साझी संपदा के संसाधन इकट्ठा करते हैं जिसकी औसत वार्षिक क़ीमत 693 रुपये है और जिसका 58 प्रतिशत हिस्सा ईंधन की लकड़ी के लिए होता है। इसके अलावा यह भी देखा गया है कि सार्वजनिक तालाबों में मछली पालन हेतु नीलामी होती है जिसे दूसरे गांव के लोग या समूह/सहकारी समिति ऊंची बोली लगाकर पट्टे पर ले लेते हैं जबकि स्थानीय समुदाय उसके लाभ से वंचित हो जाता है। गुजरात सरकार ने वर्ष 2005 में यह नीतिगत निर्णय लिया कि कोई औद्योगिक समूह 2000 एकड़ तक बंजर ज़मीन को बागवानी हेतु 20 वर्षों तक पट्टे पर ले सकता है, इससे वहां के 25-40 लाख घुमंतू लोग प्रभावित हुए हैं। विश्व बैंक द्वारा सहायता प्राप्त बड़ी-बड़ी परियोजनाओं में कई पूर्व शर्तें जुड़ी होती हैं जैसे- सिंचाई, भोजन, किरासन, यातायात, खाना पकाने की गैस आदि से अनुदान हटा लिया जाए। विद्यालयों, चिकित्सालयों, नलकूपों से सिंचाई आदि पर शुल्क लगाया जाए। उसकी यह मान्यता है कि अनुदान से अर्थव्यवस्था में विद्रूपता आती है जबकि बाज़ार से मूल्य निर्धारण मांग और आपूर्ति के नियमों के तहत होने से युक्तिसंगत होता है। आज़ाद भारत में बने वन अधिनियम, 1980 से स्थानीय ग्रामीणों को लघु वनोपज से पूर्णतः वंचित कर दिया है। बाद में 2007 में बने अनुसूचित जनजाति तथा अन्य पारंपरिक वन निवासी (अधिकारों की मान्यता) अधिनियम से उन्हें थोड़ी राहत मिली है। मगर कतिपय गैर-सरकारी संगठनों और वन विभागकर्मियों के कड़े रुख के कारण तमाम ग़रीब लोग अभी तक इससे लाभान्वित नहीं हो सके हैं। दूसरी ओर, बड़े बांध निर्माण की नीति के कारण तमाम ग्रामीण लोग विस्थापित हो चुके हैं। एक अनुमान के अनुसार आज़ादी के बाद से 4.44 करोड़ लोग विभिन्न विकास योजनाओं के कारण विस्थापित हो चुके हैं। ज़ाहिर है यह तथाकथित विकास विनाश का पर्याय है।

अन्य देशों की तरह भारत में भी महिलाओं की स्थिति, विकास एवं पर्यावरण के संदर्भ में दोयम दर्ज़े की है क्योंकि उनके पास प्रायः ज़मीन का स्वामित्व नहीं है। दूसरे, उनके पास रोज़गार के अवसर अपेक्षाकृत काफी कम हैं और उनकी व्यावसायिक गतिशीलता भी पुरुषों से कम है। तीसरे, उनकी शिक्षा और प्रशिक्षण (हुनर) भी पुरुषों से काफी कम है। चौथे, उन्हें एक ही काम के लिए पुरुषों से कम मज़दूरी मिलती है यद्यपि समान पारिश्रमिक अधिनियम कई दशकों से लागू है। पांचवें, ग्रामीण क्षेत्रों में श्रम-विभाजन का लैंगिक आधार भी है अर्थात कुछ कार्य (यथा- हल जोतना, छप्पर छाना) महिलाओं के लिए वर्जित हैं जबकि खाना बनाना, पानी ढोकर लाना, ईंधन और चारा इकट्ठा करना आदि महिलाओं का दायित्व है। वनों के विनाश, गांव की साझी संपदा के अतिक्रमण, सामुदायिक जलाशयों में पानी की कमी आदि के कारण महिलाओं का कार्य कठिन हो गया है तथा उनका काम करने का समय बढ़ गया है। फिर बड़े बांधों, बिजली संयंत्रों, कारखानों आदि के कारण हुए विस्थापन के फलस्वरूप पारंपरिक सामाजिक सहायता संजाल लगभग ख़त्म हो गए हैं जैसे- श्रम का विनिमय, नगद या वस्तु के रूप में उधार लेना, सूखा या बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं के दौरान मुफ़्त दान आदि। निस्संदेह, विकास ने आधिपत्य का रूप धारण कर लिया है क्योंकि यह ऊपर से थोपा गया है, इसमें कंक्रीट का जंगल तैयार करना मुख्य उद्देश्य है, बड़ा आकार ही सुंदर माना गया है, बड़ा प्राक्कलन और उच्च तकनीकी को प्राथमिकता दी गई है, विभिन्न क्षेत्रों और स्थितियों के लिए एक ही आकार/सांचा तैयार किया गया है तथा राज्य बड़ी पूंजी, बाज़ार और निजीकरण का समर्थक होने के कारण ग़रीबों के पक्ष में हस्तक्षेप करने से कतराते हैं। इस प्रकार स्थानीय ग़रीब लोगों और बाहरी अमीर लोगों, ठेकेदारों/पूंजीपतियों के हितों में भीषण टकराव हो रहा है जिससे हिंसा पैदा हो रही है। कहने का आशय यह है कि इस तरह का विकास एकपक्षीय, अदूरदर्शी, तात्कालिक और प्राकृतिक संसाधनों का अति दोहन करने वाला है जिससे हमारी भावी पीढ़ी उनका वैसा उपयोग करने से वंचित रह जाएगी जैसा हम आजकल कर रहे हैं। यानी हमारा 'साझा भविष्य' ख़तरे में है, कभी विकास के अभाव के कारण, तो कभी ग़लत विकास के प्रभाव के कारण। दुर्भाग्यवश, पंचायती राज व्यवस्था के जरिये होने वाला विकास भी उतना ही एकायामी, अदूरदर्शी और गैर-जनसहभागिता वाला है जितना ऊपर से शासन-प्रशासन के जरिये किया जाने वाला विकास। जापानी बहुराष्ट्रीय कंपनी मित्सुबिशी इलेक्ट्रिक प्रचार करती है: प्रौद्योगिकी+पारिस्थितिकी= टिकाऊपन। मगर विकास के नाम पर एअर कंडीशनर, मोटरगाड़ियों के पुर्जे, एलिवेटर, एस्केलेटर, रेल यातायात संयंत्र आदि का बढ़ावा अंततः पर्यावरण को टिकाऊ नहीं बनाता। अतः ऐसे भ्रामक प्रचारों से लोगों को सावधान होने की ज़रूरत है।

उल्लेखनीय है कि जी. हार्डिन जैसे कुछ विद्वान 'साझी संपदा की त्रासदी' की बात करते हैं और मानते हैं कि साझी संपदा सबके लिए खुली होने के कारण अतिक्रमण का शिकार होती है और निजी स्वार्थवश कुछ लोग इसका अतिदोहन करते हैं, इसलिए इसका निजीकरण कर देना चाहिए। मगर दूसरी ओर नोबेल पुरस्कार विजेता राजनीतिशास्त्री एलिनोर ओस्ट्राम का मानना है कि कुछ नियमों और प्रतिबंधों के साथ साझी संपदा का टिकाऊ और न्यायप्रद उपयोग कम ख़र्च पर स्थानीय समुदाय द्वारा सामूहिक रूप से बेहतर ढंग से किया जा सकता है। निजीकरण अथवा सरकारी विनियमन के जरिये साझी संपदा का प्रबंधन बदतर परिणाम देते हैं। फिर भी सामुदायिक प्रबंधन को शासन द्वारा वैधिक तथा तकनीकी मदद दी जा सकती है। इसके अलावा यह भी सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि साझी संपदाओं का सीमांकन सुस्पष्ट रूप से कर दिया जाए, वनरोपण अभियान चलाया जाए, अधिक से अधिक फलदार वृक्षों को लगाया जाए, चरागाहों की देखरेख सुनिश्चित की जाए, समता एवं न्याय का सिद्धांत सभी ग्रामीणों के लिए बिना भेदभाव के लागू किया जाए, जनता की सहभागिता बढ़ाई जाए, सभी अतिक्रमण साझी संपदा से हटाए जाएं। इस दिशा में वृहत्तर दिशा-निर्देश केंद्र/राज्य शासन द्वारा निर्गत किया जाना चाहिए ताकि विकास विनाश का रूप धारण न करें और साझी संपदा का उपयोग स्थानीय लोग टिकाऊ ढंग से करें। ❑

(लेखक भारतीय प्रशासनिक सेवा से संबद्ध वरिष्ठ अधिकारी हैं।

ई-मेल : sush84br@yahoo.com)

अनुकूलता और चुनौतियां

● प्रांजल धर

विकास एक व्यापक संकल्पना है और पर्यावरण के साथ उसका जटिल एवं परिवर्तनीय संबंध है। औद्योगिक और तक़नीकी प्रगति के साथ विकास की परिभाषा और पर्यावरण की चिंता महत्वपूर्ण होती गई है। उदाहरण के लिए सत्तर-अस्सी साल पहले विकास का मतलब बांधों का निर्माण करके बिजली का उत्पादन करना था लेकिन आज विकास का अर्थ बांध बनने की वज़ह से विस्थापित हुए लोगों का पुनर्वास करना है। यह पर्यावरण के प्रति दुनिया की चिंता को ही दर्शाता है कि आज हम सिर्फ़ विकास को अपना लक्ष्य नहीं बनाते बल्कि सतत व संपोषणीय विकास के व्यापक उद्देश्य का अनुसरण करते हैं। मानव विकास सूचकांक भी विकास को जिस वस्तुनिष्ठ पैमाने पर मापता है, उसमें जीवन-प्रत्याशा अनिवार्य रूप से जल, जंगल, ज़मीन, हरियाली, पर्वत, पठार, नदियों और समुद्र से जुड़ी हुई है और यह सब एक ऐसे विकास तक पहुंचने की कोशिश को रूपायित करते हैं जहां पर्यावरण का संरक्षण किया जा सके। चाहे वह किसी विश्वविद्यालय की बैठक हो या फिर संयुक्त राष्ट्र संघ की अनेक एजेंसियों की अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठियां। जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण और विकास की चिंता सर्वोच्च प्राथमिकता वाले एजेंडे में रखी जाती है। हाल ही में वर्ष 2011-12 के लिए भारत की जो आर्थिक समीक्षा प्रकाशित की गई है, उसमें एक नवीन अध्याय जोड़ा गया है। इस अध्याय का शीर्षक है, 'अनवरत विकास और जलवायु परिवर्तन।' यह नया अध्याय इस बात का सुखद संकेत है कि सरकार अब जनता के प्रत्येक तबके को पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाने के लिए अधिकाधिक कटिबद्ध है।

अपने वृहद आयामों में विकास का मुख्य फ़ोकस बुनियादी संरचनाओं के निर्माण पर रहा है ताकि नागरिकों को मिलने वाली सेवाएं गुणवत्तापरक, द्रुत और उपयोगी हों। प्रकृति को जीतने की बात करने वाला पुराना भौगोलिक दृष्टिकोण अब प्रासंगिक नहीं रह गया है। आज प्रकृति के साथ तथा प्रकृति के अनुकूल चलने की बातें की जा रही हैं। इसका कारण यह है कि अब प्रकृति, पारिस्थितिकी और पर्यावरण को मानव-अस्तित्व के बुनियादी कारकों में गिना जाता है। फिर भी पर्यावरण से संबंधित प्रमुख चुनौतियां पिछले दो दशकों में अधिक सघन हुई हैं। वन एवं पर्यावरण मंत्रालय द्वारा पर्यावरण व्यवस्था पर वर्ष 2009 की रिपोर्ट में इस मुद्दे पर व्यापक नज़रिया अपनाया गया है। आर्थिक समीक्षा 2011-12 के अनुसार, अब पर्यावरण व्यवस्था को पांच प्रमुख चुनौतियों के साथ जोड़कर देखा गया है। ये पांच प्रमुख चुनौतियां इस प्रकार हैं : जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा, जल-सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा और शहरीकरण प्रबंधन।

विकास एवं पर्यावरण के आपसी संबंधों को समझने के लिए इन पांचों चुनौतियों को क्रम से समझना आवश्यक है। पहली चुनौती जलवायु परिवर्तन की है जो प्राकृतिक पारिस्थितिकी को प्रभावित करती है और भारत में काफी मात्रा में इसके प्रतिकूल असर की आशंकाएं मौजूद हैं। ख़ासतौर पर कृषि, जिस पर हमारी 58 प्रतिशत आबादी अपनी आजीविका के लिए निर्भर है, इस मामले में एक सुभेद्य क्षेत्र के रूप में उभरती है। कृषि पर जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव की आशंका है। हिमालय के हिमनद, जो प्रमुख नदियों तथा भूजल पुनर्संचयन के मुख्य स्रोत हैं, में पानी की कमी चिंता का एक अन्य विषय है। आज जब हमारा देश विकास के पथ पर अनवरत बढ़ रहा है तब हमें इस बात का पूरा ध्यान रखना होगा कि जलवायु परिवर्तन न सिर्फ़ समुद्र की सतह को ऊपर उठाकर हमारी तटीय बस्तियों के लिए ख़तरा उत्पन्न कर रहा है, बल्कि यह उग्र प्राकृतिक आपदाओं यथा-तूफान, सूखे तथा बाढ़ के लिए भी ज़िम्मेदार है। आज हमारी सरकार इस बात को स्वीकार करती है कि आगे चलकर यही समस्याएं देश की खाद्य सुरक्षा और जल सुरक्षा को भी संकट में डाल सकती हैं। इसके अतिरिक्त विकास के पथ को प्रशस्त रखने के लिए भारत को अपनी तेज़ी से बढ़ रही ऊर्जा आवश्यकता को भी पूरा करना है। ताज़ा आंकड़ों के मुताबिक अभी हमारा देश अपनी तेल ज़रूरतों को पूरा करने के लिए अस्सी फ़ीसदी तक आयात पर निर्भर है। ग्रामीण जनसंख्या का एक बड़ा

हिस्सा आज भी ग्रिड या सक्षम आधुनिक ईंधन संसाधनों से नहीं जुड़ पाया है। भारत की प्रतिव्यक्ति ईंधन खपत का औसत 439 किग्रा है जो विश्व की औसत ईंधन खपत 1,688 किग्रा से काफी कम है। योजना आयोग की हालिया रिपोर्ट बताती है कि घरेलू क्षेत्र में ईंधन की कमी केवल इसलिए नहीं है कि इस क्षेत्र में विद्युत शक्ति की उपलब्धता का अभाव है। यह इसलिए भी है कि भोजन पकाने और रोशनी के लिए हम आज भी ईंधन के पारंपरिक साधनों यथा- मिट्टी के तेल एवं मोमबत्ती पर निर्भर हैं।

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (एनएसएसओ) के 2004-05 के ताज़ा सर्वेक्षण के अनुसार 45 फ़ीसदी ग्रामीण आबादी किरासन तेल अथवा मोमबत्ती पर निर्भर रहने के लिए मज़बूर है और प्राथमिक रूप से लगभग 84 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या भोजन पकाने के लिए ईंधन के तौर पर बायोमास मिश्रणों यथा- जलावन की लकड़ी, गोबर के कंडों तथा खेती-किसानी के अवशिष्टों का उपयोग करती है। अंततः शहरीकरण बहुत तीव्रता से बढ़ रहा है जिससे आवास, खाद्य, पेयजल की आपूर्ति, स्वच्छता, ठोस क़चरा प्रबंधन, परिवहन तथा वायु शुद्धता जैसे नये-नये मुद्दे भी उभर रहे हैं।

पर्यावरण एवं वहनीय विकास के संदर्भ में भारत ने उल्लेखनीय उपलब्धियां हासिल की हैं। भूमि प्रयोग के दबाव के बावजूद जंगलों में वृद्धि हुई है जो पर्यावरणीय वहनीयता का प्रमुख मापक है। उपग्रह से प्राप्त आंकड़े इस बात की पुष्टि करते हैं कि भारत न केवल वनों के विनाश को रोकने में सक्षम है बल्कि इसका जंगल क्षेत्र भी 1990 और 2010 के बीच बढ़ा है। भारत उन चुनिंदा विकासशील देशों में से एक है जहां पिछले बीस वर्षों में वनाच्छादित क्षेत्रों में बढ़ोतरी हुई है और यह बढ़ोतरी आज भी जारी है। हालांकि 2011 के आंकड़ों में थोड़ी कमी ज़रूर देखी गई है। देखा जाए तो वर्ष 2011 को संयुक्त राष्ट्र ने 'वनों के अंतरराष्ट्रीय वर्ष' के रूप में घोषित किया था। उद्देश्य था- वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों के लाभ हेतु सभी प्रकार के वनों के सतत प्रबंधन, संरक्षण एवं विकास के प्रति जागरुकता का संवर्द्धन करना, लेकिन भारत में इस आयोजन का बस इतना ही प्रभाव रहा है कि यहां का वनावरण प्रतिशत, दो वर्षों में अत्यंत मामूली रूप से ही सही, घटा है। भारत वन स्थिति रिपोर्ट, 2011 भारतीय वन सर्वेक्षण विभाग, देहरादून द्वारा जारी की जा चुकी है। इस रिपोर्ट के अनुसार भारत में वनावरण इसके भौगोलिक क्षेत्रफल का 21.05 प्रतिशत है। वर्ष 2009 की रिपोर्ट के मुताबिक यह प्रतिशत 21.06 थी। ज़ाहिर है कि भारत में संयुक्त राष्ट्र वन वर्ष के उद्देश्य में निहित भावना के अनुरूप वनावरण प्रतिशत में वृद्धि हेतु तीव्र प्रयासों की आवश्यकता है क्योंकि यह अभी भी राष्ट्रीय वन नीति द्वारा निर्धारित न्यूनतम मानक 33 प्रतिशत से कम है।

पर्यावरण के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में वनों की भूमिका विकास के लिए बेहद महत्वपूर्ण है। आज यह बात सामान्य ज्ञान का अनिवार्य हिस्सा समझी जाती है कि विकास का अर्थ मॉलों, कॉलोनियों, कॉम्प्लेक्सों, टाउनशिपों और फ्लाईओवरों के निर्माण तक ही सीमित नहीं है। वन विकास के अनोखे पहिये के रूप में उभरे हैं और भारत वन स्थिति रिपोर्ट (आईएसएफआर), 2011 इसी दृष्टिकोण को गहराई से रेखांकित करती है। यह बात चिंताजनक है कि वर्ष 2009 की तुलना में वर्ष 2011 में पर्वतीय एवं जनजातीय जिलों में वनावरण में क्रमशः 548 वर्ग किमी एवं 679 वर्ग किमी की कमी दर्ज़ की गई है। क्या यह बात विसंगतिपूर्ण नहीं है कि हम जिन क्षेत्रों को विकास की मुख्यधारा से जोड़ने की पूरी कोशिश कर रहे हैं, वनावरण में कमी उन्हीं इलाक़ों के इर्द-गिर्द दर्ज़ की गई है? इससे सरकार और समाज की ज़िम्मेदारियां दोगुनी बढ़ जाती हैं। एक तो इन इलाक़ों को विकास की मुख्यधारा में शामिल करके विकास की एकांगिता को सुनिश्चित करना और दूसरा यहां की पारिस्थितिकी और पर्यावरण को अस्तित्व और विकास के सर्वथा अनुकूल बनाए रखना। यह भी ग़ौरतलब है कि पिछले दो वर्षों में प्रकृति का घर कहे जाने वाले पूर्वोत्तर भारत में भी वनावरण में 549 वर्ग किमी की निवल कमी आई है। प्रमुख प्रश्न यह है कि पर्यावरण के साथ विकास की संगति और अनुकूलता को किस तरह स्थापित किया जाए?

पर्यावरण और विकास में आपसी संगति को बढ़ाने के लिए न सिर्फ़ अनेक देशों की सरकारें अपने-अपने घरेलू स्तरों पर क्रियाशील हैं, बल्कि, यूनाइटेड नेशंस फ्रेमवर्क कन्वेंशन ऑन क्लाइमेट चेंज जैसे वैश्विक प्रयास भी विकास को पर्यावरणोन्मुख बनाने के लिए प्रमुखता से जारी हैं। चर्चित बाली कार्ययोजना के पश्चात दिसंबर 2010 में कानकुन में हुई वार्ताओं के फलस्वरूप कुछ फ़ैसले लिए गए जो बाली कार्ययोजना में तैयार की गई रूपरेखा के अनुसार कार्रवाई के विभिन्न क्षेत्रों, प्रशमन, अनुकूलन, तक़नीक तथा वित्त को कवर करते हैं। 28 नवंबर से 10 दिसंबर, 2011 के दौरान आयोजित डरबन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन, विकास को मानवोचित बनाए रखने की दिशा में एक महत्वपूर्ण क़दम है। डरबन सम्मेलन के निष्कर्ष हरित जलवायु निधि (जीसीएफ) और अनुकूलन फ्रेमवर्क से संबंधित कानकुन करारों की प्रगति को प्रतिबिंबित करते हैं। हमारी आर्थिक समीक्षा की ताज़ा रिपोर्ट यह बताती है कि भारत ने यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है कि

तालिका

वन क्षेत्र की दृष्टि से विश्व के शीर्ष दस देश

क्रम संख्या	देश	वन क्षेत्र (लाख हेक्टेयर में)
1	रूस	809
2	ब्राज़ील	519
3	कनाडा	310
4	अमरीका	304
5	चीन	206
6	कांगो प्रजातांत्रिक गणराज्य	154
7	ऑस्ट्रेलिया	149
8	इंडोनेशिया	94
9	सूडान (अविभाजित)	69
10	भारत	68

स्रोत : खाद्य एवं कृषि संगठन की वैश्विक वन संसाधन आकलन यानी जीएफआरए रिपोर्ट, 2010

नयी व्यवस्थाएं न सिर्फ एक प्रोटोकॉल अथवा एक विधिक लिखत तक सीमित हों बल्कि कन्वेंशन के अंतर्गत विधिक बल सहित एक सहमत परिणाम का विकल्प भी इसमें शामिल किया जाए।

पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों ने विकास को सदैव गति प्रदान की है और इसीलिए यह हमारी ज़िम्मेदारी बनती है कि हम अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिए उससे सुंदर और रमणीक धरती छोड़कर जाएं, जितनी हमारे पूर्वजों ने हमारे लिए छोड़ी थी। संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन (एफएओ) द्वारा प्रस्तुत विश्व के वन संसाधनों के नवीनतम आकलन के अनुसार, विश्व का कुल वन क्षेत्र 4,033 लाख हेक्टेयर है जो कुल भूक्षेत्र का क़रीब 31 फीसदी है। विश्व में वनों का औसत प्रतिव्यक्ति आकलन 0.6 हेक्टेयर के स्तर पर है। दक्षिण एशियाई क्षेत्रों में वनावरण यहां के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 19 प्रतिशत है जबकि भारत में यह 23 प्रतिशत है। यह बात गौर करने लायक है कि इस क्षेत्र के भूटान, श्रीलंका एवं नेपाल में वनावरण प्रतिशत भारत से अधिक है। विश्व में वन क्षेत्र की दृष्टि से शीर्ष दस देशों की स्थिति दी गई तालिका से समझी जा सकती है।

ज़ाहिर है कि सूडान के विभाजित होने के बाद शीर्ष देशों में वनावरण को लेकर भारत नौंवे स्थान पर आ जाएगा। हमें इस बात से प्रेरणा लेनी चाहिए कि नेपाल और भूटान जैसे हमारे पड़ोसी हरियाली या पर्यावरण के मसले पर हमसे कम समृद्ध नहीं हैं और हमें पर्यावरण के प्रति कुछ और सजग उत्तरदायित्व निभाने की ज़रूरत है ताकि विकास और पर्यावरण के जटिल रिश्तों को समझकर ऐसा विकास किया जा सके जो पर्यावरण की क़ीमत पर न हो, जो मानव के अस्तित्व की क़ीमत पर न हो और जिसमें किसी मनुष्य का दम न घुटे। राष्ट्रकवि दिनकर ने ऐसे विकास की परिकल्पना करके ही लिखा था : *घुट रही नर-बुद्धि की है सांस; चाहती वह कुछ बड़ा जग, कुछ बड़ा आकाश।* इस जग और आकाश को पर्यावरण के प्रति जागरूक करके ही बड़ा बनाया जा सकता है। विकास और पर्यावरण के प्रति लोगों को जागरूक करने के लिए अच्छी पुस्तकों की मदद ली जा सकती है। हाल ही में प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह ने संसद में कहा भी है कि स्वस्थ एवं सुदृढ़ पुस्तक-संस्कृति हमारी पीढ़ियों को संस्कारित करेगी और हम इस योग्य बन सकेंगे कि नये समय की नयी-नयी चुनौतियों का सामना कर सकें। तब विकास भी होगा, पर्यावरण भी बचा और बना रहेगा और जनता के अलावा हमारे पशु-पक्षियों समेत समस्त मानवता भी खुशहाल रहेगी। ❑

(लेखक नयी दिल्ली स्थित स्वतंत्र पत्रकार है।
ई-मेल : pranjaldhar@gmail.com)

राजीव रंजन सिंह के व्यक्तिगत मार्गदर्शन में
नामांकन जारी
लोक प्रशासन
विषय की वास्तविक समझ एवं सटीक प्रश्नोत्तर लिखने की कला विकसित करने हेतु एकमात्र संस्थान
आगामी बैच
मुख्य परीक्षा
27 मई 2012
समय : प्रातः 7.30 से 10.00
INTERFACE IAS ACADEMY
2244, Hudson Lane
Kingsway Camp
(G.T.B. Nagar Metro Station)
Delhi-9
लोक प्रशासन एवं सामान्य अध्ययन हेतु स्तरीय पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध
011-27121867; 27247894; 9711604497; 9013000264
YH-17/2012

आस्था IAS नामांकन जारी

500 से अधिक छात्र R.Kumar से ध्यानपूर्वक Eco.पढ़ते हुए

Shah Faesal, (1st Rank IAS 09) with R.Kumar Director AASTHA IAS

सामान्य अध्ययन

(Mains + Pre. + CSAT)

''क्या पढ़ें? क्या छोड़ें? जो पढ़ें उसे कैसे याद करें?

ऐसी स्थिति में जब सामान्य अध्ययन में सूर्य एवं उसके नीचे की सभी कुछ शामिल

By

R.Kumar & Team

आस्था IAS एक बेहतर विकल्प क्योंकि

- सभी शिक्षक विषय विशेषज्ञ एवं अनुभवी जैसे- R.Kumar, K.P Singh, Sanjay Singh, K.Mukesh, Raman Jee, C.K. Karan, Dr. V.P. Singh, Dr. S.L. Singh, Anil Singh, Surendra Raut
- कठिन खंड जैसे अर्थव्यवस्था (200 अंक) विज्ञान प्रौ०(100 अंक) भूगोल के पाठ्यक्रम का विस्तृत एवं गहन अध्यापन
- श्रेष्ठ नोट्स, गहन अध्यापन, उच्चस्तरीय समझ के आधार पर To the point लेखन शैली का विकास प्रोजेक्टर, इंटरनेट का भी उपयोग सहायक
- सुविधाएँ जैसे सफल छात्रों द्वारा मार्गदर्शन, शाह फैसल, (1st Rank-IAS 09) मिथिलेश मिश्रा (46th Rank IAS 10) नरेन्द्र मीणा (46th Rank IAS 09) प्रशांत सिंह, राजीव रंजन, प्रभाकर चौधरी विवेक गुप्ता द्वारा आस्था IAS के छात्रों का प्रत्यक्ष मार्गदर्शन किया गया
- UPSC के साथ UP., BPSC, MP, Raj, JPSC, Uttara., Haryana, Chattis.PCS की भी तैयारी

जीवंत पत्राचार पाठ्यक्रम उपलब्ध

सामान्य अध्ययन + CSAT

(लगभग 80% प्रश्न प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप में नोट्स से)

(Printed Notes + Class Notes, Test Paper

पत्राचार पाठ्यक्रम शुल्क

Mains + Pre. + CSAT - 6,000

प्रारम्भिक परीक्षा Paper I & II - Rs. 3500

G.S. (Mains) - Rs. 3500

फोन से संशय समाधान सुविधा भी उपलब्ध

Many More...

वैकल्पिक विषयः- उर्दू, मैथिली, हिन्दी साहित्य, इतिहास, तथा अन्य...

M-2, Jyoti Bhawan, Mukherjee Nagar, - 011 27651392, 9810664003

YH-23/2012

धरती के अस्तित्व को विकास की चुनौती

● महेश राठी

विकास के नाम पर होने वाला अंधाधुंध औद्योगीकरण ही आज इस खूबसूरत नीले ग्रह के अस्तित्व को चुनौती दे रहा है। पूंजी संचय के लिए होने वाले औद्योगीकरण की देन ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन वायुमंडल के लिए ख़तरा बन रहा है और यही ख़तरा पृथ्वी के पर्यावरण की तबाही का कारण है। अंधाधुंध औद्योगीकरण से होने वाली ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के कारण धरती के तापमान में दो डिग्री सेल्सियस की बढ़ोतरी हो चुकी है और विकास की वर्तमान रफ़्तार के अनुसार सदी के अंत तक इसमें एक से साढ़े पांच डिग्री सेल्सियस तक की बढ़ोतरी का अनुमान है। ऐसा नहीं कि इस ख़तरे से पूरी दुनिया अनजान है। दुनिया के वैज्ञानिकों, सरकारों एवं जागरूक नागरिकों ने बहुत पहले से ही इस ख़तरे का संज्ञान लेते हुए इस पर चर्चा एवं चिंता शुरू कर दी थी। दुनियाभर के राजनेताओं, पर्यावरणविदों और वैज्ञानिकों के लिए पिघलते हुए हिमनद, उफनते समुद्र, बदलते मौसम और गर्म होती धरती जहां चिंता का विषय है वहीं विकसित दुनिया की राजनीति पूरी तरह अपने हितों को साधने की कूटनीतिक चालों में व्यस्त है। अभी तक इस नीले ग्रह को बचाने के प्रयासों में जीत पूंजी संचय के कूटनीतिक इरादों की ही हो रही है।

जून 1988 में टोरंटो में बदलते मौसम पर आयोजित एक अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में इस पर चर्चा करते हुए कहा गया कि दुनिया एक मानव निर्मित ख़तरे कि तरफ बढ़ रही है। साथ ही इस ख़तरे पर रोक लगाने की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए सम्मेलन में 2005 तक कार्बन उत्सर्जन में बीस प्रतिशत तक की कटौती का लक्ष्य रखा गया था। तत्पश्चात जलवायु परिवर्तन पर अंतरराष्ट्रीय पैनल (इंटरगर्वमेंटल पैनल फॉर क्लाइमेट चेंज-आईपीसीसी) की पहली बैठक नवंबर 1988 में जेनेवा में हुई जिसमें तय किया गया कि सभी सरकारों का दायित्व है कि वे जलवायु परिवर्तन पर जानकारी रखें एवं उसके प्रभावों का मूल्यांकन करते हुए उसके समाधान के उपाय करें। इसके मद्देनज़र आईपीसीसी ने सबसे पहले अगस्त 1990 में जलवायु परिवर्तन पर पहली बार अपनी एक रिपोर्ट प्रकाशित की जिसमें बदलते मौसम और गर्म होती पृथ्वी की सतह के बारे में जानकारी और चिंता ज़ाहिर की गई। इसके बाद संयुक्त राष्ट्रसंघ की पहल पर जून 1992 में रियो द जेनेरियो, ब्राज़ील में पृथ्वी शिखर सम्मेलन का आयोजन हुआ जिसमें जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र समझौता (यूएनएफसीसीसी) पर सहमति जताते हुए 154 देशों ने हस्ताक्षर किए। इस शिखर सम्मेलन में विकसित देशों ने अधिकतर कार्बन उत्सर्जन की जिम्मेदारी लेते हुए सन् 2000 तक उत्सर्जन को 1990 के स्तर तक घटाने की बात कही। यूएनएफसीसीसी द्वारा बनाई संबद्ध पक्षकारों के सम्मेलन (सीओपी) की पहली बैठक 1995 में बर्लिन, जर्मनी में आयोजित की गई जिसमें ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन के सुझावों को अपर्याप्त मानते हुए कहा गया कि उत्सर्जन को रोकने के लिए हरेक देश के लिए अलग-अलग वैधानिक बाध्यता तय की जानी चाहिए। पहली सीओपी की इस घोषणा को बर्लिन मेंडेट के नाम से जाना जाता है। दिसंबर 1996 में आईपीसीसी ने जलवायु परिवर्तन पर अपनी दूसरी रिपोर्ट जारी की जिसमें जलवायु परिवर्तन से लोगों पर होने वाले प्रभावों को दर्शाया गया। जुलाई 1996 में जेनेवा में सीओपी के दूसरे सम्मेलन ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन के लिए वैधानिक बाध्यता और एक समय-सारणी तय की गई। इसी सम्मेलन में अमरीका ने एक अंतरराष्ट्रीय उत्सर्जन व्यापार योजना का प्रस्ताव रखा जिस पर सौ से अधिक देशों ने अपनी सहमति जताई। मार्च 1997 में जेनेवा में यूरोपीय पर्यावरण मंत्रियों की एक बैठक में 2010 तक सभी औद्योगिक देशों द्वारा 1990 के स्तर से पंद्रह प्रतिशत तक उत्सर्जन कम करने का निर्णय किया गया। साथ ही इस बैठक में यह भी कहा गया कि विकसित और विकासशील सभी देश पर्यावरण को स्थिर रखने के लिए अपना उत्सर्जन घटाएं।

संबद्ध पक्षकारों के सम्मेलन की तीसरी बैठक जापान के क्योटो शहर में दिसंबर 1997

में हुई जिसमें 150 देशों ने भाग लिया। इस क्योटो बैठक का जलवायु परिवर्तन के लिए आयोजित बैठकों में विशेष महत्व है। इसी बैठक में होने वाली गहन चर्चा के बाद क्योटो प्रोटोकॉल का प्रस्ताव पारित किया गया। यह क्योटो प्रोटोकॉल औद्योगिक और कुछ मध्य यूरोपीय देशों को 2008 से 2012 तक 1990 के स्तर से 6 से 8 प्रतिशत ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन घटाने की कानूनी बाध्यता बनाता है। किंतु अमरीका, ऑस्ट्रेलिया और कनाडा जैसे औद्योगिक देश इसके अनुमोदन से बचते रहे। अमरीका के किसी भी राष्ट्रपति ने सीनेट के अनुमोदन के लिए इसे अभी तक सीनेट में दाखिल नहीं ही किया है। हालांकि इस क्योटो प्रोटोकॉल में कुछ बचाव के रास्ते भी हैं। यदि औद्योगिक देश अधिक उत्सर्जन करते हैं तो वे ग़रीब अल्प विकसित देशों से उत्सर्जन का व्यापार कर सकते हैं अर्थात उत्सर्जन क्रेडिट यानी उधार ख़रीद सकते हैं, लेकिन उसके लिए उन्हें ग़रीब देशों को उसका मूल्य चुकाना होगा। इसी कारण हेग में सीओपी की छठी बैठक भी नाकामयाब रही। अमरीका, जापान, कनाडा और ऑस्ट्रेलिया इससे बचने के लिए लगातार चालाकी करते रहे जबकि यूरोपीय संघ और कुछ द्विपीय देश इसे लागू करते हुए उत्सर्जन घटाना व उत्सर्जन उधारी चुकाना चाहते हैं। आईपीसीसी, जिससे 2,500 से भी अधिक वैज्ञानिक एवं विशेषज्ञ जुड़े हैं और जो दुनिया के जलवायु निरीक्षण के लिए सबसे अधिक विश्वसनीय संस्था मानी जाती है, ने जनवरी-मई 2001 में अपनी तीसरी रिपोर्ट जारी की जिसमें कहा गया कि इस बात के पुख़्ता सबूत मौजूद हैं कि धरती का तापमान पिछले पचास सालों के दौरान इधर के कुछ सालों में सबसे अधिक बढ़ा है।

संयुक्त राष्ट्र संघ के जलवायु परिवर्तन सम्मेलनों की शुरुआत जहां दुनियाभर के राजनेताओं, पर्यावरणविदों और वैज्ञानिकों के लिए पिघलते हुए हिमनदों, महासागरों के बढ़ते जलस्तर, धसकते पहाड़ों, बदलते मौसम और गर्म होती धरती की चिंताओं का केंद्र थी वहीं कोपेनहेगेन, कानकुन और डरबन तक पहुंचते-पहुंचते यह चिंता विकसित दुनिया के हितों को साधने की कूटनीतिक चालों को पूरा करने के साधन स्थलों में बदल चुकी थी। अंततोगत्वा इस धरती को बचाने पर जीत पूंजी संचय के कूटनीतिक इरादों की हुई। जलवायु परिवर्तन पर कई दिनों तक चली कानकुन व डरबन वार्ता कोपेनहेगेन की विफलता का दूसरा चक्र सिद्ध हुई है। दरअसल, कोपेनहेगेन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन दुनिया की पर्यावरण चिंताओं का एक अहम एवं निर्णायक पड़ाव था। कोपेनहेगेन सम्मेलन पर्यावरण सुरक्षा के लिए क्योटो प्रोटोकॉल के कानून बनने से रोकने की कोशिशों और रुकावटबाजों की कामयाबी का साक्षी बना। अमरीका के नेतृत्व में विकसित देशों की कार्बन उत्सर्जन को थामने की वैधानिक बाध्यता बनने से रोकने की कोशिश कोई नयी व पहली नहीं थी। इस प्रोटोकॉल को कानून बनाने के लिए 55 प्रतिशत औद्योगिक देशों के अनुमोदन की आवश्यकता थी परंतु अमरीका सहित कनाडा, जापान और ऑस्ट्रेलिया सरीखे उसके तमाम सहयोगी देशों ने क्योटो प्रोटोकॉल के कानून बनने में रुकावट पैदा की। दुनिया बेशक तेज़ी से एक मानव निर्मित विनाश की ओर बढ़ रही हो मगर विकास के वकीलों के अपने तर्क़ और योजनाएं हैं, जिसके लिए वे दुनिया को धमकाना भी जानते हैं और ब्लैकमेल करना भी। अमरीकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने कोपेनहेगन में भारत, ब्राज़ील, दक्षिण अफ्रीका और चीन के राष्ट्राध्यक्षों की गुप्त बैठक में अचानक पहुंच कर जो काम किया, वाशिंगटन के राजनीतिक विश्लेषक इस घटना पर बेशक ऐतिहासिकता का मुलम्मा चढ़ाकर अभिभूत हों मगर यह तय है कि पहले राष्ट्रपति ओबामा ने इन राष्ट्राध्यक्षों को धमकाने की कोशिश की और बात बनती न देखकर सौदेबाजी करते हुए सौ करोड़ का सालाना पैक़ेज दे डाला। प्रतिवर्ष सौ करोड़ डॉलर के इस पैक़ेज ने न जाने कितने समय के लिए कानूनी बाध्यता का दूसरा क्योटो प्रोटोकॉल बनने से रोक दिया है यह आने वाला समय ही बताएगा।

यदि क्योटो प्रोटोकॉल का दूसरा चरण कोपेनहेगेन में तैयार हो जाता तो 2050 तक पृथ्वी के बढ़ते तापमान को दो डिग्री की सीमा में रखने के लिए कम-से-कम पचास प्रतिशत की कटौती आवश्यक होती एवं औद्योगिक देशों के लिए यह कटौती अस्सी प्रतिशत तक होती। दुनिया के पर्यावरणविदों और वैज्ञानिकों के लिए कोपेनहेगेन शिखर सम्मेलन का एजेंडा जहां दूसरे क्योटो समझौता का प्रारूप तैयार करना था वहीं पहले क्योटो समझौते को न मानने वाले देशों के लिए दूसरे प्रोटोकॉल को रोकना प्राथमिकता थी। अब वार्षिक सौ करोड़ डॉलर के मुआवज़े पर कानूनी बाध्यता से बचने का उपाय बेहद सस्ता है। विकासशील देशों का समूह ब्रिक्स हालांकि इस समझौते से संतुष्ट नज़र आ रहा है, परंतु यह संतुष्टि कितनी सतही थी यह कानकुन और डरबन तक आते-आते पूरी तरह से स्पष्ट हो चुका है। आज दुनिया धरती के तपन के ख़तरे को झेल रही है। इस संकट में विकसित देशों की भागीदारी साठ प्रतिशत है और इससे निपटने के लिए महज़ सौ करोड़ सालाना का मुआवज़ा। यह उस अमरीका द्वारा प्रस्तावित राशि है जिसका सालाना रक्षा बजट ही 668 करोड़ डॉलर प्रतिवर्ष का है। अपने विकास क्रम में अभी तक के सबसे गंभीर मानव निर्मित ख़तरे को झेल रही इस धरती को सुरक्षित रखने के लिए अमरीका व अन्य विकसित देश उतनी क़ीमत भी देने के लिए तैयार नहीं हैं जितनी कि अमरीका हर साल अफगानिस्तान और इराक में अपने कब्जे के लिए ख़र्च कर रहा है।

पिछले डरबन जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में यूरोपीय देशों द्वारा विकासशील देशों के हितों पर कुठाराघात की तमाम कोशिशों का भारतीय प्रतिवाद उल्लेखनीय था। भारत की पर्यावरण मंत्री जयंती नटराजन ने दुनिया के तमाम तथाकथित पर्यावरणविदों और पश्चिमी देशों की कोशिशों को रोकने के साथ ही आईपीसीसी के झूठ को भी उजागर करने का काम बेहद मुखरता और प्रतिबद्धता के साथ किया। वास्तव में जलवायु परिवर्तन के सर्वाधिक गंभीर ख़तरों का सामना विकासशील और दुनिया के सबसे ग़रीब देश ही कर रहे हैं क्योंकि उनमें से अधिकतर देशों के पास इतने संसाधन भी नहीं हैं कि वे ऐसे ख़तरे से अपना बचाव कर सकें जिसके पैदा होने में उनका कोई योगदान ही नहीं है। फिर भी दुनिया का प्रत्येक व्यक्ति और क्षेत्र इस पर्यावरणीय

प्रभावों से अछूता नहीं है। जहां जलवायु परिवर्तन के कारण दुनिया को बाढ़, सूखे और अनियमित वर्षा चक्रों का सामना करना पड़ेगा वहीं इसके कारण संक्रामक रोगों में भी बढ़ोतरी होगी और आने वाले वर्षों में 22 से 30 प्रतिशत जैविक प्रजातियों के नष्ट होने एवं जैव-विविधता के प्रभावित होने का भी ख़तरा बना हुआ है। इसके अतिरिक्त यदि आईपीसीसी की 2007 की रिपोर्ट को आधार मानें तो वैश्विक तपन को कम करने की लागत में भी इज़ाफ़ा हुआ है जो 20 डॉलर से बढ़कर 100 डॉलर तक हो सकती है और लागत में यह इज़ाफ़ा पेट्रोलियम पदार्थों की क़ीमत में प्रति गैलन एक डॉलर तक बढ़ोतरी कर सकता है। इसके अलावा बिजली उत्पादन की लागत भी इससे प्रभावित होगी। अब यदि जलवायु परिवर्तन की गति को धीमा करने के लिए बाध्यकारी कानून क्योटो प्रोटोकॉल को रोकने के लिए घोषित 100 अरब के वित्त पैकेज़ से कार्बन उत्सर्जन पर होने वाले ख़र्च से तुलना की जाए तो स्थिति अपने आप स्पष्ट हो जाएगी। केवल अमरीका द्वारा प्रतिव्यक्ति कार्बन उत्सर्जन की दर 20 टन वार्षिक के लगभग है और अमरीका का कुल घरेलू उत्सर्जन सात हज़ार मीट्रिक टन सालाना से अधिक है। अब वैश्विक तपन को कम करने के ख़र्च सौ डॉलर प्रतिटन से इसकी गणना की जाए तो यह सौ अरब का पैकेज़ ऊंट के मुंह में जीरे से ज़्यादा कुछ भी नहीं है। इस पैकेज़ की घोषणा से कार्बन उत्सर्जन में कमी हो या नहीं, कार्बन उत्सर्जन कम करने के बाध्यकारी कानूनों पर ज़रूर लगाम लग जाएगी। अमरीका का कार्बन उत्सर्जन जहां उसकी जीवनशैली के कारण अधिक है वहीं दुनिया का कारखाना बने चीन का सर्वाधिक कार्बन उत्सर्जन करने वाले देश का स्थान उसकी औद्योगिक गतिविधियों के कारण है। परंतु यह भी ध्यान देने वाला तथ्य है कि अमरीका का प्रतिव्यक्ति कार्बन उत्सर्जन अभी भी चीन से तीन गुणा और भारत से लगभग दस गुणा अधिक है। अब इसको नियंत्रित करने के लिए जब तक बाध्यकारी प्रावधान सख़्ती से लागू नही होंगे, धरती के बढ़ते तापमान को काबू कर पाना मुश्किल है क्योंकि कार्बन उत्सर्जन को रोकने के लिए बाध्यकारी सख़्त कानूनों के सिवा कोई दूसरा प्रभावी विकल्प हो ही नहीं सकता है। ग़रीब देश भी वैश्विक तपन को कम करने की इस मुहिम का हिस्सा बनें इसके लिए ज़रूरी है कि अमीर देश कार्बन उत्सर्जन व्यापार के प्रावधानों को मानते हुए अपनी कार्बन उधारी ईमानदारी से चुकाते हुए गरीब देशों को संसाधन मुहैया कराएं। आखिरकार ग़रीब देशों की प्राकृतिक विपदाओं का कारण भी अमीर देशों सरीखी सुविधा, संपन्नता और पूंजी संचय की अंधी दौड़ ही है। वर्तमान कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने के उपायों के अतिरिक्त भी दुनिया के पर्यावरणविदों, वैज्ञानिकों एवं प्रबुद्ध राजनेताओं का दायित्व है कि वो विकास एवं इसके लिए ज़रूरी ऊर्जा के विकल्पों को आजमाने पर भी विचार करें। जब तक इन नये विकल्पों का प्रयोग नहीं किया जाएगा तब तक इस खूबसूरत नीले ग्रह का भविष्य ख़तरे में ही रहेगा और हम अपने ही द्वारा तैयार की गई मृत्यु की ओर बढ़ते रहेंगे, लगातार। ❑

(लेखक नयी दिल्ली स्थित स्वतंत्र पत्रकार हैं।

ई-मेल : rathimahesh5@gmail.com)

YH-18/2012

IAS PCS

दीक्षांत

सा. अध्ययन

& CSAT By

DR. S. S. PANDEY & Team

WORKSHOP 29 May 5.30 PM

समाजशास्त्र

By

DR. S. S. PANDEY

WORKSHOP 29 May 4 PM

हमारे संस्थान के सफल छात्र

सीट आरक्षित कराने हेतु भेजे *Registration Fee- Rs. 5,000/- (Adjustable in fee)*

DISTANCE Education Programme

SOCIO MAINS	GS MAINS	GS PT
Rs. 8,000/-	Rs. 8,000/-	Rs.5,000/-
• Study Material	• Study Material	• Study Material
• Class Notes	• Class Notes	• Class Notes
• 10 Tests	• 10 Tests	• 10 + 10 Tests

Please Send DD in favour of Dikshant Education Centre, payable at Delhi with 2 Passport Size Photographs.

PT + MAINS SPECIAL PROGRAMME

• नवीन घटनाओं एवं नवीन सैद्धांतिक विकास के साथ सम्बद्ध करते हुए अध्यापन • प्रश्नोत्तर परिचर्चा कार्यक्रम जिसमें संभावित प्रश्नों के उत्तरों की रूपरेखा पर चर्चा एवं UPSC में पूछे गए 10 वर्षों के प्रश्नों की समीक्षा • राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय, राजनैतिक, आर्थिक, समसामयिक व सामाजिक विषयों की तैयारी हेतु विश्लेषणात्मक प्रशिक्षण व्यवस्था • PCS परीक्षा हेतु विशेष कक्षा कार्यक्रम • Current Affairs और सामान्य ज्ञान अभिवर्धन पर विशेष बल • NCERT, India Year Book, Economic Survey, Hindu आदि पर आधारित परीक्षण व्यवस्था • त्रिस्तरीय जांच परीक्षा- 1. Daily Class Test, 2. Unit Wise Test, 3. Test Series

TATA Mc Graw Hill से प्रकाशित पुस्तकें

Dikshant Education Centre 303-309-310, Jaina Building Extension, Commercial Complex, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi-110009, Ph.: 011-27652723, 9868902785, E-mail: dikshantias2011@gmail.com

YH-19/2012

जल और स्वच्छता का जटिल अंतर्संबंध

● रंजन के. पांडा

जनगणना 2011 के आंकड़े हाल ही में प्रकाशित हुए हैं। देश में जल और स्वच्छता की स्थिति से सरोकार रखने वाले लोगों को उन आंकड़ों से प्रसन्न होने का एक छोटा-सा अवसर हाथ लगा है जिनमें पेयजल सुविधाओं के विस्तार को पहले से बेहतर बताया गया है। देश में स्वच्छता की दयनीय स्थिति को देखते हुए यह कोई ज़्यादा खुशी की बात नहीं कही जा सकती क्योंकि पानी की कमी एक ऐसी बड़ी वज़ह रही है जिससे अनेक लोग शौचालय का उपयोग नहीं कर पा रहे हैं। समीक्षक इस तथ्य को एक बड़ा मुद्दा बना रहे हैं कि देश के लोगों के पास शौचालय कम हैं और मोबाइल फोन अधिक। परंतु ये लोग यह बात बड़ी आसानी से भूल जाते हैं कि मोबाइल फोन की तुलना शौचालयों से नहीं की जा सकती। पहले तो यह कि मोबाइल फोन एक अधिकार नहीं माना जा सकता और दूसरी बात यह है कि मोबाइल फोन को चलाने के लिए पानी की आवश्यकता नहीं होती। शौचालय की सुविधा और उसके उपयोग के लिए पर्याप्त मात्रा में पानी की आवश्यकता होती है और यही कारण है कि पानी का अधिकार स्वच्छता के अधिकार की पूर्व शर्त है।

पेयजल और स्वच्छता की स्थिति

जनगणना 2011 के आंकड़ों के अनुसार, जहां तक घरों में सुविधाओं का प्रश्न है, 43.3 प्रतिशत घरों में पाइप के ज़रिये पानी आता है, जिसमें से 32 प्रतिशत उपचारित जल होता है और 11.5 प्रतिशत अनुपचारित। 42 प्रतिशत घरों में हैंडपंप और नलकूप का इस्तेमाल होता है, 11 प्रतिशत लोग कुएं का पानी प्रयोग करते हैं, जिनमें से केवल 1.6 प्रतिशत कुएं ही ढके हुए हैं और अंत में, 3 प्रतिशत लोग ही पानी के अन्य स्रोतों का उपयोग करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में 51.9 प्रतिशत घर-परिसर हैंडपंप/नलकूप पर निर्भर करते हैं जबकि 31.8 प्रतिशत घरों में पाइप से पानी आता है। जहां 47 प्रतिशत परिवारों में पानी का स्रोत उनके अपने घर में ही उपलब्ध है, 36 प्रतिशत परिवारों को ग्रामीण क्षेत्रों में 500 मीटर की दूरी और शहरी क्षेत्रों में 100 मीटर की दूरी से पानी लाना पड़ता है। इसके अतिरिक्त 17 प्रतिशत लोग ऐसे हैं जिन्हें ग्रामीण क्षेत्रों में 500 मीटर और शहरी क्षेत्रों में 100 मीटर से भी अधिक की दूरी से पानी लाना पड़ता है।

58 प्रतिशत परिवारों को स्नान की सुविधा अपने घर में ही मिली हुई है अर्थात उनके घरों में ही स्नानगृह बने हुए हैं। वर्ष 2001 की तुलना में इसमें 22 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। इसका अर्थ है कि ग्रामीण क्षेत्रों में 45 प्रतिशत लोगों और शहरी क्षेत्रों में 87 प्रतिशत लोगों के घरों में ही गुसलखाने बने हुए हैं। 47 प्रतिशत परिवारों को शौचालय की सुविधा घर में ही उपलब्ध है, जबकि 36 प्रतिशत घरों में आधुनिक जल व्ययन वाले शौचालय का उपयोग होता है। 9 प्रतिशत घरों में गड्ढे वाले शौचालय बने हैं। बिना शौचालय वाले घरों की संख्या में 2001 की तुलना में 2011 में 11 प्रतिशत की कमी आई है।

जनगणना के आंकड़ों पर मोटे तौर पर नज़र डाली जाए तो पता चलेगा कि पानी की सुविधा में तो सुधार हुआ है, परंतु स्वच्छता के मामले में प्रगति कोई अधिक उत्साहवर्धक नहीं रही है। पानी और स्वच्छता के क्षेत्र में कार्य करने वाली स्वैच्छिक संस्था 'वाटर एड' ने जनगणना के आंकड़ों के प्रकाशन के तत्काल बाद ही उनका विश्लेषण किया है। संस्था की डॉ. इंदिरा खुराना के अनुसार स्वच्छता की प्रगति को और गति देने की आवश्यकता है। स्वच्छता में कमी का सीधा संबंध पांच वर्ष से कम आयु के बच्चों और महिलाओं में एनीमिया के स्तर से है। इसका सीधा संबंध बच्चों, विशेषकर पांच वर्ष से कम आयु के बच्चों की बीमारी और मृत्युदर से भी होता है।

देश के आधे से अधिक घरों में शौचालय नहीं हैं

एक ऐसा देश जो विश्व की आर्थिक महाशक्ति बनने के लिए संघर्षरत है, उसके लिए यह समाचार शुभ नहीं कहा जा सकता। एक और बात जो हमें हतोत्साहित करती है, वह यह कि हम अभी तक लाखों महिलाओं को मीलों पानी भरने के लिए चलने से रोक नहीं सके हैं। यह जीवनरक्षक स्रोत लोगों का 'अधिकार' माना जाता है और इसे लोगों को सहज मिलना ही चाहिए, परंतु इसे लेने के लिए अनेक महिलाओं को मीलों चलना पड़ता है। शौचालय तो अभी तक दिवास्वप्न बने हुए हैं, क्योंकि स्वास्थ्य और स्वच्छता के ख़तरों का सामना करने के लिए आवश्यक यह सुविधा अभी तक देश की लगभग आधी आबादी को मयस्सर नहीं है। कुछ और भी आंकड़े हैं जो यह दावा करते हैं कि लगभग दो-तिहाई लोगों को शौचालय की सुविधा प्राप्त नहीं है।

जैसाकि जनगणना का दावा है, पानी की सुलभता की स्थिति कुछ बेहतर है। परंतु ग़ौर

करने लायक बात यह है कि देश के अधिकांश लोग जिस टोंटी वाले नल से पानी लेते हैं वह सभी लोगों का साझा स्रोत होता है। वह नल घर की चारदीवारी में नहीं होता। ग्रामीण भारत में ऐसी महिलाओं का प्रतिशत काफी ज़्यादा है– लगभग 17 प्रतिशत जिन्हें पानी लाने के लिए कम से कम आधा किलोमीटर तो चलना ही पड़ता है। इस बात के आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं कि पहले इन महिलाओं को कितना चलना पड़ता था। जैसा हमारा अनुभव है कि अनेक दूर-दराज़, जनजातीय बहुल और वनों से घिरे गांवों की महिलाओं को पीने का पानी लाने के लिए मीलों चलना पड़ता है और यह पानी भी दूषित और अनुपचारित स्रोतों का होता है। जनगणना के अनुसार देश के केवल 43.5 प्रतिशत लोग ही नल के पानी का उपयोग करते हैं, जिसका लगभग 25 प्रतिशत अनुपचारित होता है। इससे स्पष्ट है कि देश की आबादी लगभग 70 प्रतिशत ऐसा पानी पीती है, जो अनुपचारित है।

देश स्वास्थ्य संबंधी ख़तरों के प्रति अभी भी संवेदनशील बना हुआ है। जनगणना के अनुसार, हालांकि 49.2 प्रतिशत लोग खुले में शौच करते हैं, परंतु सहस्राब्दी विकास लक्ष्य (एमडीजी) के संयुक्त निगरानी कार्यक्रम (जेएमपी) का आकलन है कि ऐसे लोगों की संख्या (खुले में शौच करने वालों की) क़रीब 61 प्रतिशत है। यूनिसेफ और विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) ने इसी वर्ष मार्च में जल और स्वच्छता संबंधी एमडीजी के संयुक्त निगरानी कार्यक्रम के लक्ष्य जारी किए थे, जिससे इस बात की पुष्टि होती है कि स्वच्छता अभी भी एक चुनौती बनी हुई है। एमडीजी ने 2015 तक जो लक्ष्य हासिल करने का इरादा जताया है, भारत उससे 11 वर्ष पीछे चल रहा है। वास्तव में, देश में कई प्रकार के आंकड़े मौजूद हैं (देखें तालिका में विविधता) और इसी से पता चलता है कि हमें इन सबकी व्यापक निगरानी की कितनी अधिक आवश्यकता है।

आंकड़ों में विविधता

वाटर एड के एक अध्ययन से स्पष्ट है कि जनगणना के आंकड़ों और सरकार के अधिकृत साइट पर उसी अवधि के आंकड़ों में काफी भिन्नता है। अधोलिखित तालिका से इस बात को भली-भांति समझा जा सकता है।

इस प्रकार, जहां तब शौचालय सुविधा वाले घरों के आंकड़ों का प्रश्न है, जनगणना के मुक़ाबले एमडीडब्ल्यूएस के आंकड़ों में 23.2 प्रतिशत का अंतर है। जनगणना 2011 की तुलना में एमडीडब्ल्यूएस के आंकड़ों में शौचालय वाले घरों की संख्या अधिक दिखाई गई है। आंकड़ों में उपर्युक्त भिन्नता के अतिरिक्त, अभी हाल ही में 6 मार्च को यूनिसेफ और डब्ल्यूएचओ ने एमडीजी के संयुक्त निगरानी कार्यक्रम द्वारा पानी और स्वच्छता के क्षेत्र में प्रगति संबंधी जो आंकड़े जारी किए हैं उससे भी इस बात की पुष्टि होती है कि स्वच्छता भारत के लिए एक चुनौती बनी हुई है। एमडीजी ने 2015 का जो लक्ष्य रखा है, भारत उससे 11 वर्ष पीछे है। लगभग 62 करोड़ 60 लाख लोग यानी 59 प्रतिशत आबादी अभी भी खुले में शौच करती है। यह स्थिति भयावह और दुखद है। आर्थिक महाशक्ति बनने के प्रयास में जुटे देश में इस तरह की स्थिति स्वीकार्य नहीं है।

जल और स्वच्छता से संबंधित 6 मार्च को जारी जेएमपी की रिपोर्ट के अनुसार जहां पानी के मामले में भारत ने 2015 की समय सीमा के पांच वर्ष पूर्व ही लक्ष्य को हासिल कर लिया है, वहीं स्वच्छता अभी भी एक गंभीर चुनौती बनी हुई है। जेएमपी के ताज़ा आंकड़ों में 1990 और 2010 के अनुमानों का विश्लेषण किया गया है। भारत में भी इसी प्रकार की प्रवृत्ति है। पेयजल के क्षेत्र में भारत ने क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर पर निश्चय ही बेहतर प्रदर्शन किया है, परंतु 59 प्रतिशत लोगों का खुले में शौच जाना निश्चित ही चिंतनीय विषय है और पानी के मामले में हुई प्रगति का अर्थ यह नहीं है कि देश में स्थिति वास्तव में सुधर गई है। पेयजल के मामले में भारत और चीन ने जो प्रगति की है, वह अपने-अपने क्षेत्र में काफी प्रभावशाली कही जा सकती है। वैश्विक स्तर पर जो लक्ष्य निर्धारित किया गया था, उसका आधे से अधिक चीन और भारत ने ही पूरा कर दिखाया है। इन 78 करोड़ लोगों में चीन और भारत के लोगों को मिलाकर 21 करोड़ 60 लाख लोग हैं जो जलापूर्ति के बेहतर साधनों से वंचित हैं। इस प्रकार विश्व की जनसंख्या के क़रीब 28 प्रतिशत लोगों को पेयजल सुलभ नहीं है। जेएमसी के अनुसार भारत के 9 करोड़ 70 लाख लोगों को पेयजल की सुविधा अभी भी सुलभ नहीं है।

पानी और स्वच्छता के संकट को एक साथ हल करने की आवश्यकता है

पानी और स्वच्छता के जिस संकट का सामना करना पड़ रहा है, उससे केवल यही नहीं पता चलता कि हम विकास के मामले में कितने पीछे हैं, बल्कि यह भी पता चलता है कि देश के ग़रीबों को किस प्रकार इसका

तालिका

	जेएमपी 2012 (दिसंबर 2010 तक के आंकड़े)	जनगणना 2011 गृहसूची एवं आवासीय जनगणना के आंकड़े (फरवरी 2010 से सितंबर 2010)	एमडीडब्ल्यूएस (जनवरी 99 से दिसंबर 2010)
राष्ट्रीय पेयजल कवरेज	92 प्रतिशत	82.4 प्रतिशत	90 प्रतिशत (अब तक)
राष्ट्रीय स्वच्छता कवरेज	39 प्रतिशत	30.7 प्रतिशत	74 प्रतिशत (नवंबर 2011 तक)
खुले में शौच (राष्ट्रीय)	61 प्रतिशत (67 प्रतिशत ग्रामीण; 14 प्रतिशत शहरी)	49.2 प्रतिशत	
ग्रामीण स्वच्छता कवरेज	33 प्रतिशत	30.9 प्रतिशत	53.09 प्रतिशत
शहरी स्वच्छता कवरेज	86 प्रतिशत	81.6 प्रतिशत	अनुपलब्ध
ग्रामीण पेयजल कवरेज	90 प्रतिशत	77.9 प्रतिशत	लगभग 70 प्रतिशत
शहरी पेयजल कवरेज	97 प्रतिशत	91.9 प्रतिशत	अनुपलब्ध

नतीज़ा भुगतना पड़ता है। इससे ज्ञात होता है कि हमारे ग़रीबी के आंकड़ों में किस प्रकार स्वच्छता और सुरक्षित पेयजल से वंचित लोगों को बाहर कर दिया जाता है। जैसाकि हमने हाल की कुछ रिपोर्टों में देखा है, दयनीय पेयजल आपूर्ति और स्वच्छता का अभाव हमारी भयावह स्थिति का चित्र बखूबी पेश करते हैं। पेयजल-स्वच्छता से वंचित विशाल जनसंख्या में महिलाओं की स्थिति काफी विषम है। सबसे अधिक तकलीफ़ उन्हें ही भुगतनी पड़ती है, क्योंकि परिवार के लिए पानी लाने की जिम्मेदारी उन पर रहती है। ब्रिटिश चिकित्सकीय पत्रिका के अगस्त 2011 के अंक में प्रकाशित लैसेट स्टडी में यह बात साफतौर पर कही गई है कि भारत में महिलाएं और बच्चे खून की कमी (एनीमिया) से गंभीर रूप से पीड़ित हैं। इसमें चिंता व्यक्त की गई है कि पांच वर्ष से कम आयु के लगभग 40 प्रतिशत बच्चों में खून की कमी पाई गई है, जो एक भयावह स्थिति है। दिसंबर में आई हंगामा रिपोर्ट में भी कहा गया है कि पांच वर्ष से कम आयु के 42 प्रतिशत बच्चों का भार स्वीकार्य मानक से कम है। इसमें यह भी बताया गया है कि क़रीब 49.9 प्रतिशत बच्चे जन्म से ही कम वजन के होते हैं और क़रीब 33.5 प्रतिशत बच्चों का भार जन्म के बाद कम हो जाता है।

भावी दिशा

ग्रामीण विकास मंत्री जयराम रमेश ने हाल ही में शिकायत की कि महिलाएं शौचालय की मांग नहीं कर रही हैं। अधिकतर लोगों को पानी की उपलब्धता और शौचालयों के अनुपात में अंतर नज़र नहीं आता। प्रश्न यह है कि कोई महिला शौचालय में इस्तेमाल के लिए पानी लेने उतनी दूर क्यों जाएगी? उसे तो खुले में शौच आसान लगेगा। यही बात पुरुषों पर भी लागू होती है। पानी और शौचालय के बीच जो असंतुलन है, वह काफी गंभीर है। उसको दूर करने के प्रयास करने ज़रूरी हैं। पानी की कमी बढ़ने के साथ यह असंतुलन और भी भारी हो जाएगा। यदि देश चाहता है कि स्वच्छता की सुविधा भी उसी प्रकार बेहतर हो सके जैसे पानी के मामले में हुई है, तो इन दोनों समस्याओं का निराकरण एक साथ ही करना होगा। दोनों को अलग करके नहीं, बल्कि एक-दूसरे के साथ जोड़ने से ही यह असंतुलन दूर होगा। देश अब यह मानने लगा है कि पानी और स्वच्छता लोगों का बुनियादी मानवीय अधिकार है। राष्ट्रीय जल नीति, 2012 के प्रारूप में भी यह बात कही गई है। हमारे कार्यक्रमों और योजनाओं में पानी और शौचालयों को पृथक करने से काम नहीं चलेगा। हमें आवश्यकता है एक ऐसे उपयुक्त वातावरण की जिसमें दोनों का एकीकरण हो सके। इसके साथ ही ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए जिसमें स्वच्छता और आजीविका के लिए पानी का आवंटन कानूनी रूप से प्राथमिकता के आधार पर किया जाए। यदि हम देश में खुले में शौच के स्थान पर सम्मानपूर्वक शौच करने की व्यवस्था में बदलने के प्रति गंभीर हैं तो ऐसा करना ज़रूरी है। ❑

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार और जल अनुसंधान संस्था वाटर इनिशियेटिव **के संयोजक हैं।**
ई-मेल : ranjanpada@gmail.com)

संयुक्त राष्ट्र संघ में
बहुपक्षीय जलवायु परिवर्तन प्रणाली के अंतर्गत स्थापित निधियां

- **विशेष जलवायु परिवर्तन निधि (एससीसीएफ) :** इस निधि की व्यवस्था हरित पर्यावरण निधि (जीईएफ) द्वारा की जाती है जो अनुकूलन, प्रौद्योगिकी अंतरण एवं क्षमता निर्माण, ऊर्जा, परिवहन, उद्योग, कृषि वानिकी एवं अपशिष्ट प्रबंधन और आर्थिक विविधीकरण संबंधी परियोजनाओं में वित्त-पोषण करता है।
- **न्यूनतम विकसित देश निधि (एलडीसीएल) :** सर्वाधिक कम विकसित देश निधि राष्ट्रीय अनुकूलन कार्य योजनाएं (एनएपीए) तैयार करने एवं उनके क्रियान्वयन में सर्वाधिक कम विकसित देशों की मदद करने के लिए एक कार्ययोजना में सहायता करता है। दिसंबर 2011 तक एलडीसीएफ ने परियोजनाओं के लिए लगभग 21.7 करोड़ अमरीकी डॉलर की राशि मंजूर की तथा सह-वित्तपोषण में 91.9 करोड़ अमरीकी डॉलर से अधिक की राशि जुटाई।
- **अनुकूलन निधि (एएफ) :** विकासशील देशों में ठोस अनुकूलन परियोजनाओं एवं कार्यक्रमों में वित्तपोषण करने के लिए क्योटो प्रोटोकॉल के अंतर्गत यह निधि स्थापित की गई थी। स्वच्छ विकास तंत्र परियोजना कार्यों और अन्य वित्तपोषण-साधनों पर प्राप्त आगमों के 2 प्रतिशत अंश से इस अनुकूलन निधि में वित्तपोषण किया जाता है। इस निधि का पर्यवेक्षण और प्रबंध अनुकूलन निधि बोर्ड (एएफबी) द्वारा किया जाता है। इस निधि की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषताएं ऐसी हैं कि उनसे पक्षों की निधि तक की सीधी पहुंच है जिससे अनुकूलन परियोजनाओं पर देश के स्वामित्व में वृद्धि हुई है।
- **हरित जलवायु निधि (जीसीएफ) :** डरबन, दक्षिण अफ्रीका में आयोजित सीओपी 17 में, सीओपी ने विकासशील देशों में परियोजनाओं, कार्यक्रमों, नीतियों और अन्य कार्यों में सहायता करने के लिए इस अभिसमय के अंतर्गत एक हरित जलवायु निधि स्थापित की। यह निधि 2013 से काम शुरू कर देगी, जिसके लिए विकसित देश निधि की व्यवस्था करेंगे। 2020 तक 100 अरब अमरीकी डॉलर के दीर्घकालिक वित्तपोषण के बारे में देशों द्वारा निर्णय लिया गया है और आशा है कि जीसीएफ इसके महत्वपूर्ण हिस्से की व्यवस्था कर लेगा। जीसीएफ की मुख्य विशेषता यह है कि इसकी एक स्वतंत्र विधिक हैसियत एवं व्यक्तित्व होगा। ❑

(स्रोतः यूएनएफसीसीसी)

ALOK RANJAN'S IAS

A Unit of Digmani Educations

भूगोल

द्वारा

आलोक रंजन

(09891290953)

- अंग्रेजी माध्यम के पुस्तकों पर आधारित पाठ्य-सामग्री
- एकीकृत टेस्ट श्रृंखला
- पूर्व वर्षों के प्रश्नों का विश्लेषण
- लेखन कौशल संवर्धन
- 12 दिवसीय मानचित्र एवं आरेख निर्माण कला
- उत्तर लेखन का साप्ताहिक मूल्यांकन
- आदर्श उत्तर लेखन कार्यक्रम कक्षा अभ्यास कार्य के रूप में

हिन्दी माध्यम में सफलता आपके विषय एवं शिक्षक के चयन पर निर्भर करती है।

कक्षा प्रारंभ 25th मई

सामान्य अध्ययन/CSAT

द्वारा

आलोक रंजन एवं टीम

(09891290953)

- अंग्रेजी माध्यम के समतुल्य विकसित किया गया पाठ्यक्रम
- वैषयिक विशेषज्ञता से युक्त शिक्षण कार्य
- साप्ताहिक Test एवं Current Capsule.
- 8 समग्र टेस्ट-IAS मुख्य परीक्षा 2012 के लिए
- 150 दिवसीय कक्षा कार्यक्रम

कक्षा प्रारंभ 14th जून

प्रवेश आरम्भ 15 अप्रैल से

Geography as optional has highest success ratio

Our outstanding Results CSE - 2010

18 Rank SUNIL KUMAR

20 Rank HEPHSIBA RANI K

26 Rank V S CHOUDARY KOLASANI

31 Rank MANTRI GOVINDA RAO

and over 100... results

About 752 students got interview call from geography optional for IAS 2011, out of which more 325 students from Alok Ranjan's IAS.

विशेष - प्रवेश शुल्क छूट योजना - भूगोल (हिन्दी) - 3000/-, Geography (Eng.) - 4000/-

30 अप्रैल तक (केवल मुखर्जी नगर सेंटर)

टेस्ट सीरीज कार्यक्रम प्रारम्भ 17 जून से

DIGMANI EDUCATIONS

Corporate Office : - A-18, Top Floor, Young Chamber, Behind Batra Cinema, Mukherjee Nagar, Delhi-09, Ph : 011-27658009, 9311958008, 9311958009

Branch Office : - Bldg. No. 104, IInd Floor, (Above Oriental Bank of Commerce) Bazar Marg, Old Rajender Nagar, Delhi-60, Ph : Ph : 25756009, 9311958007, 9311958008, 9311958009

www.alokranjansias.com

YH-20/2012

पर्यावरण संकट

भौतिकवाद और अध्यात्मवाद का द्वंद्व

● सरोज कुमार वर्मा

समाजशास्त्री सच्चिदानंद सिन्हा के इस कथन से अपनी बात शुरू करना प्रासंगिक प्रतीत होता है, ''इस विकास प्रक्रिया के रहते प्रदूषण पर थोड़ी रोक भले ही लग जाए, संसाधनों के विशाल क्षय को रोकना तो दूर, इसे कम भी नहीं किया जा सकता, क्योंकि विशाल मात्रा में विभिन्न कच्चे मालों और विशाल मात्रा में ऊर्जा की ख़पत रोकने से ही यह संभव है।''

आदमी की दावेदारी दुनिया के सभी प्राणियों से बेहतर होने की है, अब वह है या नहीं, इस बहस में पड़े बिना यह स्वीकार भी लिया जाए, तो अचरज होता है कि ऐसा दावा करने के बावजूद, उसने जैसी दुनिया बनाई है, वह बेहतर नहीं है। यदि होती तो इसमें अन्य प्राणियों के जान के लाले नहीं पड़े होते, वनस्पतियों की प्रजातियां लुप्त नहीं हुई होतीं, पानी का संकट नहीं आया होता, जंगल नष्ट नहीं हुए होते, समंदर उफन नहीं रहा होता और पर्वत पिघल नहीं रहा होता। अभी एक दशक भी नहीं बीता। उसने अपनी सुविधाओं के लिए अन्य प्राणियों समेत प्रकृति के तमाम उपादानों को ध्वस्त किया है, इस दलील के साथ कि विकास के लिए यह सब ज़रूरी है। बेशक उसने जिस भौतिक विकास को विकास का एकमात्र पैमाना मान लिया है उसी की वज़ह से आदमी सहित समूची धरती को विनाश के मुहाने पर ला खड़ा करने वाला पर्यावरण का यह सर्वसंहारक संकट आन खड़ा हुआ है।

'पर्यावरण' शब्द 'परिसमंतात् आवरणं' से निष्पन्न हुआ है, जिसके मुताबिक सभी ओर से दृष्टि को घेरने वाला पर्यावरण है। अब चूंकि पृथ्वी, पानी, हवा, आग, आकाश, ध्वनि और वनस्पति आदि सभी तरफ से घेरे हुए हैं, इसलिए ये ही पर्यावरण के मूल तत्व हैं। इन्हीं की वज़ह से और इन्हीं के बीच हम और अन्य सभी प्राणी जीवित रह पाते हैं। ये तत्व प्रकृति में हमेशा से एक संतुलन अवस्था में रहे हैं और मनुष्य अपने जीवनयापन के लिए उन्हें छेड़ता भी रहा है तो उसी हद तक जितने से उनका संतुलन बिगड़ने न पाए। लेकिन इन दिनों यह संतुलन बिगड़ने लगा है और वह इसलिए कि आदमी अपने विकास के नाम पर इन तत्वों को नष्ट करता जा रहा है और उसकी मात्रा इतनी अधिक होती है कि उससे उनका अनुपात बिगड़ गया है। इसी क्रम में कई प्रकार के हानिकारक गैस, जहरीला धुआं, तेज़ आवाज़, उर्वरक और क़चरा आदि इतनी अधिक मात्रा में प्रकृति में छोड़े जाने लगे हैं कि वह प्रदूषित हो गई है। पर्यावरण-संकट इसी प्रदूषण का नतीज़ा है।

यह संकट जल, ज़मीन, ताप, वायु, खनिज और वनस्पति आदि सभी क्षेत्रों में पैदा हुआ है। ज़मीन और वनस्पति का संकट सड़क बनाने, शहर बसाने, नदी बांधने, पर्यटन-स्थल विकसित करने तथा उद्योग लगाने के नाम पर जंगलों को बेतहाशा काटे जाने से पैदा हुआ है तो जल का संकट कारखानों से निकलने वाले क़चरे, घरों से निकलने वाले गंदे पानी, कूड़ा-करकट तथा सड़ी-गली चीज़ों के नदियों में मिलने से उत्पन्न हुआ है। कल-कारखानों तथा मोटरगाड़ियों से लगातार निकलने वाला धुआं हवा को प्रदूषित कर रहा है तो निरंतर चलने वाले उद्योगों तथा रेल-बस सहित सभी तरह के वाहनों से उत्पन्न शोर ध्वनि-प्रदूषण पैदा कर रहे हैं। इसी प्रकार से कोयला तथा पेट्रोलियम आदि खनिज पदार्थ को अधिक मात्रा में जलाने से एक ओर तो उनका भंडार समाप्त होता जा रहा है और दूसरी ओर उससे उत्पन्न कार्बन डाई-ऑक्साइड से वायुमंडल की गर्मी लगातार बढ़ती जा रही है। इसके अतिरिक्त कई प्रकार के अन्य गैसों के कारण पृथ्वी की सुरक्षा परत ओजोन में भी छेद हो गया है। आशुतोष उपाध्याय ने अपने तथ्यपरक रिपोर्ट में लिखा है कि ''संयुक्त राष्ट्र आईपीसीसी से जुड़े 600 से ज़्यादा वैज्ञानिकों के मुताबिक इस बात की संभावना 90 फीसदी से ज़्यादा है कि वैश्विक तपन आदमी की करतूतों का नतीज़ा है। पिछली आधी सदी के दरम्यान खासतौर पर कोयला और पेट्रोलियम जैसे जीवाश्म ईंधनों को फूंकने से वातावरण में कार्बन डाई-ऑक्साइड और दूसरी ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा ख़तरनाक हदों तक जा पहुंची है। एक अनुमान के मुताबिक आज हमारी आबोहवा में उद्योग-पूर्व युग की तुलना में 30 फीसदी से ज़्यादा कार्बन डाई-ऑक्साइड मौज़ूद है।

सामान्य स्थितियों में सूर्य से पहुंचने वाली ऊष्मा का एक हिस्सा हमारे वातावरण में जीवनोपयोगी गर्मी प्रदान करता है और शेष विकिरण धरती की सतह से टकराकर वापस अंतरिक्ष में लौट जाता है। वैज्ञानिकों के अनुसार वातावरण में मौज़ूद ग्रीनहाउस गैसें लौटने वाली अतिरिक्त ऊर्जा को सोख रही हैं जिससे धरती की सतह का तापमान बढ़ रहा है। ऐसी आशंका है कि 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी के औसत तापमान में 1.1 से 6.4 डिग्री सेंटीग्रेड की बढ़ोतरी हो जाएगी। भारत में बंगाल की खाड़ी के आस-पास यह वृद्धि 2 डिग्री तक होगी जबकि हिमालयी क्षेत्रों में पारा 4 डिग्री तक चढ़ जाएगा। अंकों की यह वृद्धि भले ही मामूली लगे लेकिन असल में यह समूची मानव सभ्यता में भारी उलट-फेर करने की क्षमता रखती है। गौरतलब है कि

क़रीब 20 हज़ार वर्ष पूर्व आए एक लघु हिमयुग के दौरान पृथ्वी के औसत तापमान से जीव-जगत की तस्वीर बदल गई थी। आज मौसम के अप्रत्याशित व्यवहार को भी वैश्विक तपन से जोड़ा जा रहा है। सूखा, अतिवृष्टि, चक्रवात और समुद्री हलचलों को वैज्ञानिक तापमान वृद्धि का नतीज़ा बताते हैं। इन नतीज़ों के कारण ही पर्यावरण का ऐसा गंभीर ख़तरा पैदा हो गया है कि अब सामूहिक विनाश की आशंका सताने लगी है। यद्यपि इस ख़तरे से बचने के लिए 1972 में स्टॉकहोम में संयुक्त राष्ट्र की ओर से पहला पर्यावरण सम्मेलन हुआ, जिसमें 5 जून को विश्व पर्यावरण दिवस के रूप में मनाने का निर्णय लिया गया। फिर इसके 20 वर्षों बाद 1972 में रियो-डी-जेनेरियो तथा उसके बाद 1997 में क्योटो में और उसके बाद भी कई पर्यावरण सम्मेलन आयोजित किए गए, लेकिन इन आयोजनों के बावजूद ऐसा नहीं लगता कि पर्यावरण के क्षरण और प्रदूषण में कोई कमी आई है और इस संकट की भयावहता कुछ कम हुई है।

इसकी वज़ह सिर्फ़ भौतिक विकास को विकास का एकमात्र पैमाना मान लेना है, जिसके मुताबिक भौतिक वस्तुओं का अधिकाधिक उपभोग करने वाला आदमी और मुल्क विकसित कहलाता है तथा जो आदमी और मुल्क ऐसा नहीं कर पाते उसे विकासशील कहा जाता है। अब क्योंकि विकास का यह पूरा ताना-बाना उद्योग-केंद्रित है, इस कारण विकसित देश उन्नत उद्योगों द्वारा अत्यधिक भौतिक संपदाओं का उत्पादन कर उनका अनियंत्रित उपभोग करते हैं और विकासशील देशों के लोग भी यही सब करने की होड़ में लगे हैं, क्योंकि ऐसा करके ही वे विकसित कहला सकते हैं। अब इन भौतिक चीज़ों के उत्पादन में जंगल, खनिज और पेट्रोलियम आदि प्राकृतिक संसाधनों का बेतहाशा उपयोग होता है जिससे इन संसाधनों का नाश होता है और उत्पादन की इस प्रक्रिया में गंदा पानी, रासायनिक क़चरा, विषाक्त गैस तथा ज़्यादा मात्रा में धुआं आदि उत्पन्न होकर प्रकृति में मिल जाते हैं जिससे वह प्रदूषित हो जाती है। अतः यह कहा जा सकता है कि औद्योगिक विकास पर्यावरण-संकट का मूल है; क्योंकि उत्पादन पर आधारित होने के कारण इस विकास-प्रक्रिया में कोयला और पेट्रोलियम आदि जिन पदार्थों की आवश्यकता होती है, वे पदार्थ असीमित नहीं हैं। ये बड़ी तेज़ी से कम होते जा रहे हैं और अगर उत्पादन का यही रफ़्तार रही तो बहुत जल्दी समाप्त हो जाएंगे। प्रकृति में मौजूद संसाधन के आधार पर मौजूदा उत्पादन प्रक्रिया सिर्फ़ 2020 तक चल सकती है और उसके बाद इसकी रफ़्तार कम होने लगेगी। इस आशंका के मूर्त रूप होने की संभावना इसलिए बनती है कि लगभग तीन दशक पहले 96.1 अरब टन कुल मात्रा वाले पेट्रोलियम में से एक वर्ष में ही 271.6 करोड़ टन निकाल लिया गया था। इस अनुपात से निकाला जाने वाला पेट्रोलियम 2019 में पूरी तरह समाप्त हो जाएगा और इसी तरह कोयला आदि खनिज भी समाप्त हो जाएंगे। इसलिए इनके बेतहाशा खपत पर रोक लगाना ज़रूरी है।

लेकिन यह रोक इसलिए नहीं लगाई जा सकती कि इस भौतिकवादी विकास के विचार ने एक ऐसी उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रचार-प्रसार किया है जिसमें आवश्यक और अनावश्यक वस्तुओं का अंतर किए बगैर व्यक्ति अधिक से अधिक वस्तुओं का उपभोग कर लेना चाहता है। लेकिन इसमें मनुष्य का भी दोष नहीं है क्योंकि उपभोक्तावादी संस्कृति की यह विशेषता है कि वह विज्ञापन के द्वारा अनावश्यक वस्तुओं का प्रचार-प्रसार कर उन्हें व्यक्ति के लिए आवश्यक बना देता है। इसी कारण आदमी की थोड़ी-सी आवश्यकताएं भी इस हद तक विस्तार पा जाती हैं कि वह उन्हें पूरा करने के प्रयास में ही अनावश्यक वस्तुओं का जख़ीरा जमा करने लगता है। अब चूंकि इन सभी अनावश्यक वस्तुओं के उत्पादन में प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और प्रकृति का प्रदूषण भी होता है, इसलिए भारत डोगरा कहते हैं कि ''विलासिता की जीवनशैली अनिवार्य रूप से पर्यावरण के विनाश से जुड़ी है। करोड़ों ग़रीबों वाली दुनिया में यह विलासिता दूसरों के संसाधन छीनने से भी जुड़ी है। जिस समाज में विलासिता की जीवनशैली का प्रसार होता है, उसे एक चमकदार उद्देश्य के रूप में प्रस्तुत किया जाता है जिसके पीछे सब दौड़ते रहें, ऐसे समाज को सार्थक विकास के उदाहरण के रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। जिस समाज में नयी से नयी उपभोक्ता वस्तुओं को बहुत आक्रामक ढंग से बेचा जाता है, नित नयी-नयी उपभोक्ता वस्तुओं की कृत्रिम भूख को उकसाया जाता है, उस समाज में न तो लोगों को संतोष मिल सकता है, न ही वहां का पर्यावरण बच सकता है।''

मगर ये समस्याएं यूं ही नहीं खड़ी की जा रही हैं, बल्कि इनके पीछे एक सुनिश्चित दार्शनिक सिद्धांत है। यह सिद्धांत सुखवाद का है। बेंथम, मिले, एपिक्यूरस, एरिस्टीपस तथा सिजविक जैसे दार्शनिक इस सिद्धांत के समर्थक हैं। यों तो इन सभी विचारकों के सुखवादी सिद्धांतों में कुछ अंतर भी हैं, लेकिन इन अंतरों के बावजूद ये सभी विचारक सुख को जीवन का चरम लक्ष्य मानने के मामले में एकमत हैं। इसलिए ये सभी मानते हैं कि आदमी ज़िंदगीभर सुख की खोज में लगा रहता है और उसका ऐसा करना ही उचित है। तभी तो बेंथम यह कहते हैं कि ''अपने लिए सुख का अधिकांश भाग प्राप्त करना प्रत्येक बौद्धिक प्राणी का लक्ष्य है।'' बेंथम ऐसा यह मानकर कहते हैं कि आदमी स्वभाव से स्वार्थी होता है। यद्यपि ऐसा मानने के बावजूद वह अपने सुखवादी सिद्धांत में 'अधिकतम संख्या में अधिकतम सुख' का विचार देकर निजी सुख के बदले सामाजिक सुख की वक़ालत करते हैं और मानव-मात्र के लिए अधिकतम सुख खोजने का प्रस्ताव प्रस्तुत कर परार्थवाद की जुगाली भी करते हैं। लेकिन अपने अधिकतम सुख के साथ दूसरे का भी अधिकतम सुख संभव कैसे है, इसका कोई सूत्र वह नहीं बता पाते।

हालांकि मिल इससे उबरने के लिए सुखों में गुणात्मक भेद मान लेते हैं और बेंथम के विचार को संशोधित कर मानसिक सुख को शारीरिक सुख से श्रेष्ठतर घोषित करते हैं और इसका फर्क़ दिखाने के लिए 'सुख' के बदले 'आनंद' शब्द का इस्तेमाल भी करते हैं, मगर इतना कुछ करने के बाद भी वह सुख और आनंद में कोई भेद नहीं कर पाते जिसके कारण उनका आनंद भी सुख का पर्याय ही हो जाता है और अंततः वह भी बेंथम की तरह सुख को ही जीवन का अंतिम लक्ष्य मानने वाले दार्शनिक सिद्ध होते हैं। इसी प्रकार दूसरे सारे सुखवादी दार्शनिक भी कमोबेश हेर-फेर के साथ सुख को ही जीवन का परम लक्ष्य प्रतिपादित करते हैं। अब चूंकि यह सुख

भौतिक वस्तुओं से प्राप्त होने वाला पूरी तरह शारीरिक और इंद्रिय है और भौतिक वस्तुएं प्राकृतिक संसाधनों के विनाश और दोहन से उत्पादित होती हैं, इसलिए यह तार्क़िक परिणति के रूप में स्थापित होता है कि सुखवाद पर्यावरण-संकट का दार्शनिक आधार है।

यदि भारतीय दर्शन में यह आधार खोजें तो यह भौतिकवाद के रूप में मिलता है जिसके प्रणेता चार्वाक हैं, क्योंकि वही ''खाओ, पीओ और मौज करो'' का सिद्धांत देकर दैहिक सुख को इस हद तक महिमामंडित करते हैं कि उसके लिए कुछ भी किया जाना अवांछित नहीं होता। अब ज़ाहिर-सी बात है कि जब दैहिक सुख ही जीवन का अभीष्ट है और वह सुख भौतिक सामग्रियों से मिलता है तो किसी भी प्रकार से इन सामग्रियों को प्राप्त करना ही आदमी का एकमात्र लक्ष्य हो जाता है और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उसे प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण और दोहन करने में भी कोई संकोच नहीं होता क्योंकि ऐसा करके ही तो उसे दैहिक सुख देने वाली भौतिक सामग्रियां मिल पाती हैं। इस प्रकार यह सुनिश्चित हो जाता है कि इस पर्यावरण-संकट का एक सुविचारित दार्शनिक आधार है।

इसलिए इस संकट का समाधान भी व्यवस्थित विचारधारा से ही हो सकती है और यह विचारधारा भारतीय दर्शन के अध्यात्मवाद से मिलती है। अध्यात्मवाद एक आध्यात्मिक परमतत्व को मानने वाला दार्शनिक सिद्धांत है। इस परमतत्व को भारतीय दर्शन में 'ब्रह्म' की संज्ञा दी गई है और उसी को मात्र सत्य मानते हुए पूरे संसार को मिथ्या माना गया है। लेकिन मिथ्या मानने का यह तात्पर्य नहीं है कि यह संसार झूठ है, जैसाकि व्याख्यायित किया जाता है और ब्रह्म का ज्ञान हो जाने पर इसकी सत्ता समाप्त हो जाती है। नहीं! इसका ऐसा कोई तात्पर्य नहीं है। इसका तात्पर्य यह है कि ब्रह्म का ज्ञान नहीं रहने पर संसार जैसा दिखाई पड़ता है ब्रह्म ज्ञान हो जाने पर वैसा दिखाई नहीं पड़ता। दरअसल, ब्रह्म और संसार दो भिन्न-भिन्न सत्ताएं नहीं हैं, बल्कि वे एक ही हैं। इसीलिए अज्ञान के कारण जो संसार भौतिक दिखाई पड़ता है, ज्ञान हो जाने पर वही आध्यात्मिक ब्रह्म दीखने लगता है। गौड़पाद और शंकराचार्य जैसे दार्शनिकों से लेकर विवेकानंद और अरविंद जैसे दार्शनिकों तक ने इस सिद्धांत का समर्थन करते हुए इसकी विस्तृत व्याख्या की है। स्वातंत्र्योत्तर युग के दार्शनिक ओशो (रजनीश) ने भी इसे बड़े सरल शब्दों में समझाते हुए कहा है–''परमात्मा के निकट जैसे-जैसे तुम जाओगे, वहां परमात्मा में संसार और मोक्ष एक ही घटना है। वहां बनाने वाला और बनाई गई चीज़ें दो नहीं हैं; वहां स्रष्टा और सृष्टि एक ही है। वहां तुम ऐसा न पाओगे कि यह वृक्ष अलग है परमात्मा से; तुम इस वृक्ष में परमात्मा को ही हरा होते हुए पाओगे।

इसका परिणाम यह होता है कि आदमी न केवल आदमी से बल्कि आदमी के अतिरिक्त प्रकृति के अन्य सभी जीवों, वनस्पतियों और निर्जीव वस्तुओं से भी आत्मीय रिश्ता बनाना चाहता है, क्योंकि सब एक ही परम सत्ता की अनंत अभिव्यक्तियां होने के कारण तत्वत: एक ही हैं। फिर किसी दूसरे जीव एवं दूसरी वस्तुओं को नुक़सान पहुंचाना वास्तव में अपने को ही नुक़सान पहुंचाना है। इसलिए अपने दैहिक सुख के लिए, अपनी भौतिक सुविधाओं के लिए दूसरे प्राणियों का, वनस्पतियों का, नदियों-पहाड़ों का तथा ज़मीन-जंगलों का विनाश करना अंतत: अपना ही विनाश करना है। यही बोध, इसी तथ्य का ज्ञान आदमी को प्राकृतिक संसाधनों के क्षरण और दोहन करने से रोक सकता है तथा प्रकृति को प्रदूषित करने से बचा सकता है।

इस अध्यात्मवाद की नींव पर ही वह संस्कृति विकसित हो सकती है जो उपभोक्तावादी न हो। विजय कुमार फ्रेड्रिक जेमसन के हवाले से आज की संस्कृति पर विचार करते हुए कहते हैं–''संस्कृति का अर्थ अब केवल आनंद और आमोद-प्रमोद है। वस्तुओं के उपभोग की जीवन-शैली ने हमारे समय में एक असामान्य किस्म के सुखवाद को फैलाया है। वस्तुओं की तरफ एक बदहवास दौड़ है। वस्तुओं के प्रति यह पूजा-भाव अब जीवन के सारे पहलुओं का प्रतिनिधित्व करने लगा है।'' अध्यात्मवाद इस प्रतिनिधित्व को बदल सकता है। वह वस्तुओं के बदहवास उपभोग की जीवन-शैली के बदले वैसी जीवन-शैली अपनाने और विकसित करने में मदद कर सकता है जो ज़रूरी उपयोग पर आधारित होने के कारण संतुलित और प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण हो जिसमें सादगी का मूल्य हो और त्याग की महत्ता हो। ऐसी ही जीवन-शैली के निर्माण के लिए गांधीजी ने पाश्चात्य सभ्यता की आलोचना कर, क्योंकि वह केवल भौतिक सुख का हिमायती है, मन की वृत्तियों की हद बांधने की बात कही थी। उन्होंने कहा था ''मनुष्य की वृत्तियां चंचल हैं। उसका मन बेकार की दौड़-धूप किया करता है। उसका शरीर जैसे-जैसे ज़्यादा दिया जाए वैसे-वैसे ज़्यादा मांगता है। ज़्यादालेकर भी वह सुखी नहीं होता। भोग भोगने से भी भोग की इच्छा बढ़ती जाती है। इसलिए हमारे पूर्वजों ने भोग की हद बांध दी।'' यद्यपि गांधी ने यह बात एक शताब्दी पहले कही थी, परंतु वह आज भी अर्थपूर्ण है क्योंकि इस हद की ज़रूरत तब से ज़्यादा अब बढ़ गई है।

वह इसलिए कि इस हद के द्वारा ही भौतिकवादी विकास के विचार को बदलकर एक ऐसे विकास का विचार प्रतिपादित किया जा सकता है जो केवल उद्योग केंद्रित न हो और जिसमें भौतिक वस्तुओं का उपभोग जीवन का अभीष्ट न हो। यह विकास एकांगी नहीं होकर सर्वांगीण होगा, क्योंकि इसमें केवल शारीरिक सुख की ही वक़ालत नहीं होगी बल्कि आत्मिक उत्थान की भी अहमियत होगी। यह एक संतुलित और संपूर्ण विकास होगा। यह संतुलन और संपूर्णता काल और वर्ग के दृष्टिकोण से भी होगा। इसलिए इस विकास में केवल वर्तमान की चिंता नहीं होगी बल्कि भविष्य का ख्याल भी होगा और यह सिर्फ़ कुछ थोड़े से लोगों की सुख-सुविधा का हिमायती होगा। सच्चिदानंद सिन्हा ऐसे विकास का मसौदा प्रस्तुत करते हुए कहते हैं, ''इसमें मनुष्य की नियति प्रकृति पर या वनस्पति जगत समेत अन्य प्राणियों पर विजय प्राप्त करना नहीं, उनके साथ एक नये तरह का तादात्म्य स्थापित करना है। आज पर्यावरण की सुरक्षा, जो अन्य जीवों और वनों की रक्षा से जुड़ी है, मानव प्रजाति के स्वयं जीवित रहने की अनिवार्य शर्त दिखाई देने लगी है। पर्यावरण के संतुलन को बनाए रखने के लिए विकास के लक्ष्य को बिल्कुल बदल देना ज़रूरी दिखाई देता है। इस दृष्टि से आदमी की ज़रूरतों को बढ़ाने और इसके लिए उपभोग की वस्तुओं के असीम विस्तार की जगह आत्म-नियंत्रण पर बल दिया जाता

(शेषांश पृष्ठ 46 पर)

SAROJ KUMAR'S IAS ERA

(हिन्दी & English Medium) with **Saroj Kumar**

Highest Achivement in *M.P.P.C.S. 2012*

Namah Shivay Arajaria
Datia (M.P.)

1 Rank in M.P.P.C.S. 2012

Highest Achivement

SANJAY Kr. AGGARWAL

1 RANK IN IAS 2002-03 in हिंदी माध्यम

INTERVIEW MARKS 226

Highest Marks: G.S. - 396, History - 408
Geog., 426, Essay - 156

Our Toppers of 2010 IAS

NITISH KUMAR
BIHAR

MANU HANSA
(JAMMU)

Nitin Tagade
MAHARASHTRA

Din Dayal Mangal
Handicaped(Teacher)
AGRA (UP)

RAKESH KR. VERMA
HAATHRAS (U.P.)

Our Topper of 2010-11 PCS

JAMMU & KASHMIR TOPPER 2011

MANU HANSA
(JAMMU)

1 RANK IN SC & ST
Highest Mark 408/600 in History

UPPCS TOPPER 2010

POONAM SIROHI
Amroha (U.P.)

BPSC TOPPER 2010

SANJAY KR. SINGH
Jahanabad, Bihar

RAS TOPPER 2011

8th Rank
RAJENDRA PENSIYA
Ganga Nagar (Raj.)

FREE WORKSHOP With SAROJ KUMAR

GEOGRAPHY (Mains)	11 A.M.	16 June
G.S. (Mains)	11 A.M.	17 June
CSAT	11 A.M.	18 June
History (Mains)+Essay+Comp. English	11 A.M.	19 June

✣ Separate Hostel for Boys & Girls ✣ Special classes for working people
✣ Weekend classes, Early Morning & Evening

FAST TRACK COURSE FOR WILLING CANDIDATES

✣ G.S. (Mains) available in Module also

Geography & G.S. (Mains)	3-4 Months
History (Mains)	4 Months
Essay	1 Month
G.S. (PT) + CSAT	4 Months
Test Series for Mains	1-2 Months
Test series for	2 Months

Delhi University Centre:- 1/9, Roop Nagar, G.T. Karnal Rd., Near Shakti Ngr.Red Light, Above. P.N.B. Delhi - 110007

Mukherjee Ngr. Centre:- B-10 Top Floor, Comm. Complex, above Bank of Maharashtra, Main Road, Dr. Mukherjee Nagar, Delhi- 110009

Ph- 9910415305, 9910360051

YH-25/2012

पर्यावरण संरक्षण हमारी प्राथमिक आवश्यकता है

● दिनेश मणि

पर्यावरण का संरक्षण आज हमारी सबसे बड़ी आवश्यकताओं में से एक है। आज इस बात की पहले से कहीं अधिक ज़रूरत है कि विकास की प्रक्रिया को इस प्रकार संशोधित किया जाए कि मनुष्य को सुख-सुविधा के साधन उपलब्ध कराने के साथ-साथ पर्यावरण का संरक्षण भी होता रहे। राष्ट्रीय योजनाएं बनाते समय पर्यावरणीय वास्तविकताओं को ध्यान में रखा जाए। हमें देश के आर्थिक विकास के प्रयत्नों के साथ-साथ जीवन को धारण करने वाली प्रणालियों और स्रोतों जैसे- मृदा, जल और आनुवंशिक विविधता के संरक्षण पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

पर्यावरण से हमारा आशय हमारे चारों ओर एक ऐसे आवरण से है जो हमें ताज़ा हवा दे, पीने लायक पानी दे और पौष्टिक खाद्य पदार्थ दे। पर्यावरण के विभिन्न घटक जैसे- जल, वायु, मिट्टी इत्यादि सब प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने में अपनी-अपनी भूमिका निभाते हैं। प्राकृतिक संतुलन न केवल प्रकृति के सौंदर्य को बनाए रखने के लिए आवश्यक है, अपितु हमारे दैनिक जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए भी अति आवश्यक है।

जब प्राकृतिक या मानवीय कारणों से पर्यावरण के किसी घटक को हानि पहुंचती है तो वह अपनी स्वनियमन व्यवस्था से उसे संतुलित करने का प्रयास करती है, पर जब वह सहन सीमा से अधिक हो जाती है, तो हमें प्रतिकूल परिणाम मिलने लगते हैं। इन परिणामों से बचने के लिए हमें सर्वप्रथम पर्यावरण के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है।

उन्नीसवीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति के दौरान उद्योगों से रोज़गार का सृजन हुआ एवं लोगों ने ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर प्रस्थान करना प्रारंभ किया। इसके परिणामस्वरूप धीरे-धीरे उपभोक्तावाद में वृद्धि होने के कारण प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग निर्माण, उद्योग, परिवहन एवं अन्य उपभोगों के लिए किया जाने लगा और शहरों में बढ़ती जनसंख्या से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या उत्पन्न हो गई। शहरीकरण सामाजिक विकास एवं आर्थिक परिवर्तन का एक स्वाभाविक प्रतिफल है। इससे व्यक्ति एवं स्थान दोनों प्रभावित होते हैं।

तीव्र गति से बढ़ते औद्योगीकरण तथा मानवीय क्रिया-कलापों द्वारा भारत ही नहीं संपूर्ण विश्व में पर्यावरण प्रदूषण एवं पारिस्थितिकी असंतुलन की स्थिति भयावह होती जा रही है। विभिन्न प्रकार के प्रदूषणों यथा- जल, वायु, मृदा प्रदूषण इत्यादि की समस्या के अतिरिक्त आज वैश्विक तपन और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याएं संपूर्ण विश्व के लिए चिंता का विषय बन गई हैं।

अक्सर यह देखा गया है कि प्रदूषण के प्रभावों की शुरुआत तो पर्यावरण के किसी एक घटक विशेष से होती है, परंतु अंततोगत्वा उनका प्रभाव अन्य दूसरे घटकों पर भी पड़ता है। आदर्श पर्यावरण वह है जिसमें हमें सांस लेने के लिए शुद्ध प्राणवायु (ऑक्सीजन) मिले, खाने के लिए शुद्ध खाद्य पदार्थ मिले तथा पीने के लिए शुद्ध पेयजल प्राप्त हो। किंतु ये चीज़ें अब दुर्लभ होती जा रही हैं। हमें इस बारे में सोचना है।

स्मरण रहे, प्रकृति और इसके घटकों के विनाश के साथ मनुष्य का विनाश सुनिश्चित है। यही कारण है कि आज अनेक सरकारी और गैर-सरकारी संगठन इस बात का विशेष प्रयत्न कर रहे हैं कि दुनिया के आम आदमी को इस चुनौती के विभिन्न पहलुओं से परिचित कराया जाए ताकि उसके अस्तित्व को संकट में डालने वाले तथ्यों की समय रहते जानकारी हो जाए और स्थिति को सुधारने के उपाय गंभीरता से किए जा सकें।

आज इस बात से यह स्पष्ट हो चुका है कि पर्यावरण के विघटन को रोकने के प्रयत्न में दुनिया के हर इंसान का जुड़ना आवश्यक है किंतु ऐसा तभी हो सकता है जब सोचने के पारंपरिक तरीक़े में एक बार फिर आमूल परिवर्तन आए। वास्तव में आज हम सभ्यता के उस कगार पर आ खड़े हुए हैं जहां हमें अपना और अपनी धरती का अस्तित्व बनाए रखने के लिए 'प्रकृति के शोषण' पर आधारित अपनी समूची मानसिकता को ही बदलना होगा।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि विकास के हर एक कार्यक्रम के दौरान पर्यावरण के स्रोतों और प्रकृति पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों का असर हर मनुष्य पर पड़ता है चाहे वह आम आदमी हो या कोई विशेष व्यक्ति। अनेक बार आम आदमी इस सीमा तक प्रभावित होते देखे गए हैं कि उनकी रोजी-रोटी तक उनसे छिन गई है।

किसी भी समस्या के निराकरण के लिए यह आवश्यक है कि उसके लिए उत्तरदायी कारणों का पता लगाया जाए। ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा में वृद्धि के लिए विकसित देशों

का योगदान विकासशील देशों की तुलना में अधिक है। विकसित देशों में प्रतिव्यक्ति ऊर्जा की खपत विकासशील देशों की तुलना में कई गुना अधिक है। इसके बावजूद अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में विकासशील देशों को ही इन समस्याओं के लिए अधिक जिम्मेदार ठहराया जाता है। एक-दूसरे पर आरोप-प्रत्यारोप से कुछ भी हासिल होने वाला नहीं है। सबसे स्पष्ट और महत्वपूर्ण बात यह है कि प्रतिव्यक्ति ऊर्जा एवं भौतिक पदार्थों के उपभोग में कमी के बिना कोई समाधान निकलने वाला नहीं है।

पर्यावरण संरक्षण किसी एक व्यक्ति का लाभ न होकर पूरी दुनिया के हर एक व्यक्ति की साझेदारी से ही संभव है। यह पर्यावरण समूची मानव जाति का साझा संसाधन है और दुनिया के हर व्यक्ति को इस पर बराबरी का हक़ हासिल है। बराबरी के सिद्धांत का यह आशय है कि आने वाले समय में प्रतिव्यक्ति उत्सर्जनों के संबंध में एक सहमति होनी चाहिए। बराबरी के आधार पर ऐसी कोई भी व्यवस्था स्वीकार्य नहीं होगी जो प्रतिव्यक्ति उत्सर्जनों में व्यापक अंतर को स्वीकृति दे। इसके अतिरिक्त पर्यावरणीय संकट की चुनौतियों का सामना करने में उत्पादन और खपत के तरीक़ों पर ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके साथ ही जीवनशैली से जुड़े मसलों पर भी ध्यान देने की इच्छाशक्ति पैदा करनी होगी। विश्व के सभी देशों को समेकित रूप से कार्बन आधारित तथा जैव-ईंधनों पर आधारित उत्पादन तथा खपत के तरीक़ों को बदलकर नवीकरणीय ऊर्जा पर आधारित व्यवस्था को प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है।

पर्यावरण संरक्षण में हर व्यक्ति की महत्वपूर्ण भूमिका है। खासकर उन लोगों की जो ऊर्जा के ख़र्च को आसानी से वहन कर सकते हैं। पर्यावरण सम्मत प्रौद्योगिकियों को अपनाकर कार्बन उत्सर्जन में भी कमी लाई जा सकती है। निजी मोटर वाहनों के इस्तेमाल में संयम बरतना होगा। स्वच्छ ईंधनों के उपयोग को बढ़ावा देते हुए सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा जैसे अपारंपरिक ऊर्जा स्रोतों को आम उपभोग के लायक बनाने के प्रयास करने होंगे। व्यर्थ वस्तुओं को पुनर्चक्रण के द्वारा पुनः उपयोगी बनाने और कूड़े-करकट को ऊर्जा में बदलने की प्रौद्योगिकी को व्यावहारिक रूप देना होगा।

पर्यावरणीय प्रभाव व ज़ोखिम मूल्यांकन के संदर्भ में इन पदार्थों के पारिस्थितिकीय व पर्यावरणीय प्रभाव के निरंतर मूल्यांकन की आवश्यकता है जिससे उच्च लागत वाली तक़नीकी के विपरीत पर्यावरणीय प्रभावों से बचा जा सके। जलवायु संबंधी पर्यावरणीय समस्याओं का मुक़ाबला करने के लिए स्थान विशेष, क्षेत्र-विशेष तथा पारिस्थितिकी तंत्र विशेष पर्यावरण प्रबंधन की आवश्यकता है।

पर्यावरण प्रबंधन के लिए यह आवश्यक है कि पर्यावरण में विद्यमान सभी घटकों के विषय में अधिकाधिक जानकारी प्राप्त की जाए। पर्यावरण से जुड़े सभी विषयों जैसे भूमि निर्माण, जलवायु विज्ञान, भूमिगत जल, मृदा अपरदन, जैव विविधता, पारिस्थितिकी वानिकी इत्यादि से संबंधित समुचित आंकड़े एकत्रित किए जाएं। इस तरह के आंकड़ों के बिना पर्यावरण का सफल संरक्षण एवं प्रबंधन संभव नहीं हो पाता। पर्यावरण के सभी घटक परस्पर एक-दूसरे से अंतर्संबंधित हैं और एक-दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। अतः पर्यावरण संरक्षण एवं प्रबंधन की योजनाओं में समन्वित दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। संसाधनों के इष्टतम उपयोग के लिए जनसाधारण को जागरूक बनाकर ही पर्यावरण संरक्षण की दिशा में पहल की जा सकती है। पर्यावरण का प्रबंधन संगठित प्रयासों से ही संभव है। इसके लिए सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठन, उद्योगपतियों, कृषकों तथा आम जनता सभी की सहभागिता जरूरी है। ❑

(लेखक *विज्ञान* पत्रिका के संपादक रह चुके हैं)

योजना

आगामी अंक

जून 2012

योजना का जून 2012 अंक **स्त्री सशक्तीकरण** पर केंद्रित होगा।

जुलाई 2012

योजना का जुलाई 2012 अंक **मानसून** पर केंद्रित होगा।

प्रत्येक अंक का मूल्य होगा मात्र ₹ 10

दलदली ज़मीन के संरक्षण की ज़रूरत

● नवनीत कुमार गुप्ता

नमभूमि अर्थात दलदली भूमि प्रकृति का एक ऐसा अनोखा और अनुपम स्वरूप है जो हमारे पर्यावरण संरक्षण में विशेष योगदान देती है। असल में नमभूमि अपनी अनोखी पारिस्थितिकी संरचना के कारण महत्वपूर्ण है। नमभूमि के अंतर्गत झीलें, तालाब, दलदली क्षेत्र, हौज कुंड, पोखर एवं तटीय क्षेत्रों पर स्थित मुहाने, लैगून, खाड़ी, ज्वारीय क्षेत्र, प्रवाल क्षेत्र, मैंग्रोव वन आदि शामिल हैं। गुजरात का नलसरोवर, ओडिशा की चिल्का झील और भितरकनिका मैंग्रोव क्षेत्र, राजस्थान का केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान तथा दिल्ली का ओखला पक्षी अभयारण्य नमभूमि क्षेत्र के कुछ प्रमुख उदाहरण हैं। अभी तक विश्वभर के 1,994 नमभूमियों को चिह्नित किया गया है जो करीब उन्नीस करोड़ अठारह लाख हेक्टेयर क्षेत्रफल पर फैली हुई हैं। इन क्षेत्रों में से 35 प्रतिशत क्षेत्र पर्यटन संभावित क्षेत्र हैं। इसलिए इन क्षेत्रों में इको-पर्यटन को बढ़ावा देने और वहां धारणीय विकास के लिए इस बार के विश्व नमभूमि दिवस का थीम 'नमभूमि और पर्यटन' रखा गया। नमभूमियां भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल के 4.63 प्रतिशत भाग पर फैली हुई हैं यानी कुल 15,26,000 वर्ग किलोमीटर भूमि पर। इनके अलावा 2.25 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल से कम आकार वाली क़रीब 5,55,557 छोटी-छोटी नमभूमियां चिह्नित की गई हैं। कुल नमभूमियों में से 69.22 प्रतिशत क्षेत्र आंतरिक हैं जबकि तटीय नमभूमियों का प्रतिशत 27.13 है।

नमभूमियों के असंख्य लाभों के कारण ये हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। असल में नमभूमि की मिट्टी झील, नदी, विशाल तालाब या किसी नमीयुक्त किनारे का हिस्सा होती है जहां भरपूर नमी पाई जाती है। इसके कई लाभ भी हैं। भूमिगत जलस्तर को बढ़ाने में भी नमभूमियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इसके अलावा नमभूमि जल को प्रदूषण से मुक्त बनाती है। यह प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने में अहम भूमिका निभाती है। बाढ़ नियंत्रण में भी इनकी भूमिका महत्वपूर्ण होती है क्योंकि यह तलछट का काम करती है जिससे बाढ़ जैसी विपदा में कमी आती है। नमभूमि शुष्क मौसम के दौरान पानी को सहेजे रखती है और बाढ़ के दौरान पानी का स्तर कम बनाए रखने में सहायक होती है। इसके अलावा ऐसे समय में नमभूमि पानी में मौजूद तलछट और पोषक तत्वों को अपने में समा लेती है और सीधे नदी में जाने से रोकती है। इस प्रकार झील, तालाब या नदी के पानी की गुणवत्ता बनी रहती है। जैवविविधता को सुरक्षित रखने में भी नमभूमियों का विशेष योगदान होता है। यह समुद्री तूफान और आंधी के प्रभाव को सहने करने की क्षमता रखती हैं। समुद्री तटरेखा को स्थिर बनाए रखने में भी नमभूमियां महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। दूसरी ओर समुद्र द्वारा होने वाले कटाव से तटबंध की रक्षा करती हैं। कार्बन चक्र में नमभूमियों का विशेष महत्व है। वैसे तो यह केवल 3-4 प्रतिशत क्षेत्र पर ही आच्छादित हैं परंतु इनमें कार्बन की 25 से 30 प्रतिशत मात्रा को अवशोषित करने की क्षमता होती है। नमभूमियां अपने आस-पास बसी मानव बस्तियों के लिए जलावन, फल, वनस्पतियां, पौष्टिक चारा और जड़ी-बूटियों का स्रोत होती हैं। कमल, जोकि दुनिया के कुछ विशेष सुंदर फूल में शुमार होने के साथ ही भारत का राष्ट्रीय फूल है, इसी दलदल में उगता है। इस प्रकार आर्थिक रूप से दलदलों यानी नमभूमियों के स्रोतों का महत्व पारिस्थितिकी आधार पर अनमोल है।

नमभूमि जैव विविधता संरक्षण के लिए महत्वपूर्ण है। ये बहुत सारे विलुप्त-प्राय जीव जैसे संगाई हिरण, मच्छीमार बिल्ली, गैंडा, डूरोंग, एशियाई जलीय भैंस आदि का ठिकाना हैं। यह शीतकालीन पक्षियों और विभिन्न जीव-जंतुओं का आश्रय स्थल भी हैं। विभिन्न प्रकार की मछलियों और जंतुओं के प्रजनन के लिए भी नमभूमियां उपयुक्त होती हैं। इन्हीं नमभूमि क्षेत्रों के आसपास कुछ माह के लिए हजारों किलोमीटर की यात्राएं कर प्रवासी पक्षियां डेरा डालने आती हैं। भारत हमेशा से प्रवासी पक्षियों जैसे राजहंस, पनकौआ, बायर्स वॉचार्ड, ओस्प्रे, इंडियन स्किम्मर, श्याम गर्दनी बगुला, संगमरमरी टील, बंगाली फ्लोरीकन आदि पक्षियों का मनपसंद प्रवास स्थल रहा है।

नमभूमियां व्यापक स्तर पर आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक स्वरूप का आधार रही हैं जिसका संरक्षण पर्यावरण की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसी संदर्भ में 2 फरवरी, 1971 को ईरान के रामसार शहर में एक अंतरराष्ट्रीय संधि हुई थी जिसमें नमभूमियों की सुरक्षा और संरक्षण को आवश्यक बनाया गया था। इस संधि को रामसार संधि भी कहा जाता है। यह संधि विश्व के दुर्लभ व महत्वपूर्ण नमभूमियों को रामसार स्थल के रूप में चिह्नित करने के साथ ही अनेक अन्य संस्थाओं के साथ मिलकर नमभूमियों के संरक्षण के लिए जागरुकता का प्रसार करती हैं। इसलिए 1997 से प्रत्येक वर्ष 2 फरवरी को विश्व नमभूमि दिवस के रूप में मनाया जाता है जिसके अंतर्गत व्यापक रूप से आम लोगों को नमभूमियों के महत्व और लाभों के प्रति जागरूक कराया जाता है।

नमभूमियां अथवा दलदली क्षेत्र सदैव

विदेशों से आए प्रवासी पक्षियों की मनपसंद आवास स्थली रही हैं। ऐसे में कोई भी जीव प्रेमी उन दृश्यों को सहेजना चाहेगा जब प्रकृति की सुंदरता के प्रतीक पक्षी से वह काफी क़रीब होता है। ऐसे अवसर का सहारा लेकर अनेक राज्यों में इको-पर्यटन पर भी ध्यान दिया जा रहा है। आज तेज़ी से ऐसे क्षेत्र पर्यटन के क्षेत्र में जगह बना रहे हैं जहां नमभूमियों के आस-पास परिंदों का डेरा लगा होता है। इस प्रकार नमभूमियां पर्यटन स्थल के रूप में आर्थिक विकास का आधार बन रही हैं। लेकिन हमें इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि हम ऐसी नमभूमियों के मूल स्वरूप को बचाए रखें ताकि वहां की पारिस्थितिकी में बदलाव न हो। क्योंकि कई बार देखने में आया है कि इंसानी दखलअंदाजी के बाद पर्यावरण के साथ छेड़छाड़ होती है। पर्यटन को बढ़ावा देने के नाम पर कई प्राकृतिक स्थलों का मूल स्वरूप ही बिगड़ जाता है। इसपर गंभीरता से मंथन करने की आवश्यकता है। वैसे हमारे देश में भी नमभूमि पर्यटन पर ध्यान दिया जा रहा है जिसके तहत गुजरात राज्य में पिछली जनवरी में द्वितीय 'ग्लोबल बर्ड वॉचर्स कांफ्रेंस' का आयोजन किया गया। ऐसे आयोजनों का आशय यही होता है कि नमभूमियों को बढ़ते प्रदूषण, बदलती जलवायु और अनियंत्रित विकास से उत्पन्न ख़तरों आदि से बचाया जा सके ताकि इन क्षेत्रों में हमेशा जीवन के विविध रूप मुस्कुराते रहें। ❑

(लेखक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय भारत सरकार के अधीन स्वायत्त संगठन 'विज्ञान प्रसार' में प्रॉजेक्ट अधिकारी हैं।

ई-मेल : charkha@bol.net.in **चरखा फीचर।)**

12वीं पंचवर्षीय योजना

कार्बन उत्सर्जन में निरंतर कमी पर जोर

आर्थिक सर्वेक्षण 2011-12 में यह सुझाव दिया गया है कि कार्बन उत्सर्जन में निरंतर कमी लाना 12वीं पंचवर्षीय योजना का एक मुख्य घटक होना चाहिए। इस सर्वेक्षण में इस बात की चर्चा की गई है कि भारत का प्रतिव्यक्ति कार्बन डाईऑक्साइड उत्सर्जन विकसित देशों की तुलना में काफी कम (1.52 कार्बन डाईऑक्साइड टन) है। हालांकि भारत ने सतत विकास की रणनीति के अनुसार अपने संसाधनों के बल पर स्वैच्छिक आधार पर इस दिशा में कई क़दम उठाए हैं। वर्ष 2008 में अपने एक प्रमुख क़दम के रूप में भारत ने राष्ट्रीय जलवायु परिवर्तन कार्ययोजना (एनएपीसीसी) को लागू किया था जिसमें वर्ष 2020 तक इन उत्सर्जनों को वर्ष 2005 के स्तर से 20 से 25 प्रतिशत तक कमी लाने की घोषणा की है।

वार्षिक आर्थिक सर्वेक्षण में सतत विकास और जलवायु परिवर्तन नामक एक अध्याय को पहली बार शामिल किया गया है। इस नये अध्याय में सतत विकास और जलवायु परिवर्तन की बढ़ती चुनौतियों के बारे में चर्चा की गई है। एक ओर जहां भूमि, वायु, जल, वन पर दबाव बढ़ रहे हैं वहीं दूसरी ओर पेड़-पौधों तथा पशुओं के रहने के स्थानों में निरंतर कमी हो रही है। सर्वेक्षण में चेतावनी दी गई है कि गर्म होती धरती प्रतिकूल प्रभावों का कारण बन रही है और मौसम की स्थिति में लगातार बदलाव आ रहा है। इसमें बताया गया है कि विज्ञान और जलवायु परिवर्तन की स्थिति से संबंधित साक्ष्य इस बात का संकेत दे रहे हैं। डरबन में दिसंबर 2011 में आयोजित बैठक की चर्चा करते हुए सर्वेक्षण में यह आशा की गई है कि जून 2012 में रियो में आयोजित होने वाले पृथ्वी शिखर सम्मेलन में वैश्विक तौर पर सतत विकास से जुड़ी प्राथमिकताओं का जायजा लिया जाएगा। डरबन बैठक में जलवायु परिवर्तन पर आधारित समुचित प्रत्युत्तर के लिए कुछ दिशा-निर्देश तय किए गए हैं। सर्वेक्षण में यह आशा की गई है कि 12वीं पंचवर्षीय योजना में सतत और समावेशी विकास के साथ ही कार्बन उत्सर्जन में कमी लाने के संदर्भ में भारत की प्राथमिकताएं निर्धारित की जाएंगी। इसमें बताया गया है कि अंतरराष्ट्रीय समुदाय के एक जवाबदेह सदस्य के रूप में भारत ने अन्य विकासशील देशों के साथ डरबन सम्मेलन की सफलता की दिशा में अपना लचीला रुख दिखाया है। विकसित देशों से इस बात की अपेक्षा की जाती है कि वे डरबन में जी-77 देशों और भारत की ओर से दिखाए गए लचीले रुख का अनुसरण करेंगे।

वैश्विक सरोकारों के प्रति भारत की संवेदनशीलता की सराहना करते हुए सर्वेक्षण में बताया गया है कि पिछले दशकों के दौरान भारत ने काफी अच्छा कार्य किया है। पर्यावरण संबंधी प्रमुख मुद्दों के प्रति इसने निधारित मार्ग का अनुसरण किया है। पर्यावरण संबंधी सरोकारों के तौर पर सतत विकास भारत की नीति और आयोजना में एक अनिवार्य घटक के रूप में शामिल रहा है। वर्ष 1980 से जारी आर्थिक सुधारों के बल पर इसने अपने विकास की गति को काफी तेज़ की है और इसने अपनी आय भी बढ़ाई है। सामाजिक समृद्धि में व्यापार सुधार हुए जिसे बढ़ती जीवन प्रत्याशा के रूप में मापा जा सकता है। भारत ने अपने वनों जैसे प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण पर ज़ोर दिया है।

भविष्य की चुनौतियों को रेखांकित करते हुए सर्वेक्षण में बताया गया है कि भारत सरकार के पर्यावरण और वन मंत्रालय द्वारा पर्यावरण की स्थिति रिपोर्ट 2009 में भारत के सामने पांच प्रमुख चुनौतियों की चर्चा की गई है जिसमें जलवायु परिवर्तन, खाद्य सुरक्षा, जल सुरक्षा, ऊर्जा सुरक्षा और शहरीकरण प्रबंधन शामिल हैं। अंततः व्यापक आर्थिक और सामाजिक विकास ही पर्यावरण संबंधी बेहतर टिकाऊपन का साधन है। ऊर्जा और अन्य संसाधनों का आर्थिक मूल्य निर्धारण ही और भी अधिक सतत विकास के लक्ष्य तक पहुंचने का माध्यम होगा। मुख्य रूप से निजी क्षेत्र में नयी प्रौद्योगिकियां महत्वपूर्ण होंगी। सर्वेक्षण में यह सुझाव भी दिया गया है कि सामाजिक न्याय के लिए ऊर्जा पहुंच और अन्य घटकों पर सार्वजनिक व्यय को बढ़ाने की जरूरत है। ❑

वैकल्पिक स्रोत से बचेगा पर्यावरण

● चन्द्रभान यादव

भारत तरक़्क़ी की राह पर दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है, लेकिन जिस गति से तरक़्क़ी हो रही है, उसी गति से हमारे देश में पर्यावरण की समस्या भी बढ़ रही है। ज़मीन, जंगल और पानी कम हो रहे हैं। ऐसी स्थिति में हमें पर्यावरण के प्रति अभी से सचेत रहना होगा। भविष्य के हालात का अंदाज़ा लगा केंद्र सरकार भी पर्यावरण के मुद्दे पर काफी गंभीर दिख रही है। यही वज़ह है कि केंद्रीय बजट में पर्यावरण संरक्षण की झलक दिखाई पड़ रही है। केंद्र सरकार ने विकास की ज़रूरत को रेखांकित करते हुए पर्यावरण समस्या पर भी चिंता जताई है और पर्यावरण संरक्षण के प्रति अपनी प्रतिबद्धता ज़ाहिर की है। कुछ दिन पहले केंद्रीय मंत्री जयराम रमेश ने 203 नये कोयला क्षेत्रों में खनन के प्रस्तावों पर यह कहते हुए मंजूरी देने से इंकार कर दिया कि अगर इन क्षेत्रों में खनन होता है तो इससे प्रदूषण तो फैलेगा ही, वहां के हरित वातावरण का भी नामोनिशान मिट जाएगा। इससे स्पष्ट होता है कि विकास की मौजूदा औद्योगिक नीतियों के चलते हमारे पर्यावरण को गंभीर नुक़सान पहुंच रहा है। इसी अहसास के चलते विनाशकारी विकास और पर्यावरण के बीच टकराव भी देखने को मिलता है। हमारे देश में ईंधन और बिजली उत्पादन में कोयला एक बड़ा कारक रहा है। लेकिन उससे होने वाला प्रदूषण और धरती के बढ़ते तापमान ने समूची दुनिया को ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों के बारे में सोचने पर मज़बूर किया है। इसलिए अब ज़रूरत है इस मुद्दे पर गंभीरता से सोचने और नयी नीति तैयार करने की।

ऐसा भी नहीं है कि यह समस्या सिर्फ़ भारत की है बल्कि समूची दुनिया ही आज पर्यावरण के संकट से जूझ रही है और उसके सामने सबसे बड़ी चुनौती है- हरित या साफ़-सुथरी तक़नीक का विकास और उसका ज़्यादा से ज़्यादा प्रचलन। इस तेज़ी से बदलती दुनिया के सामने आज जो महत्वपूर्ण चुनौतियां हैं उनमें पर्यावरणीय संकट सबसे महत्वपूर्ण है। इस समस्या ने मानवीय अस्तित्व को संकट में डाल दिया है। मौजूदा विकास की गति और स्वरूप ने पर्यावरणीय संसाधनों के ऊपर भारी दबाव डाला है। दुनिया ने विकास की गति के जिस रफ़्तार को पकड़ा है उस रफ़्तार से पीछे आना संभव नहीं है। इसलिए पर्यावरण और विकास की मौलिक अवधारणा का अंतर्द्वंद्व अब स्पष्ट रूप से सामने है। क्योंकि मानव जाति पर्यावरण के जैवमंडल का अटूट हिस्सा है। विकास की इस धारा में उत्पादन इंसान की ज़रूरतों के अलावा बाज़ार के लिए भी केंद्रीकृत हो चुका है। मांग और आपूर्ति के बाज़ारवादी सिद्धांत ने अंधाधुंध उत्पादन को प्रोत्साहित किया है। ऊर्जा संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्राकृतिक संसाधनों का दोहन जारी है। वर्तमान में संपूर्ण उद्योग-धंधों का विस्तार प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित ईंधनों पर टिका है। विकास के इस मकड़जाल के कारण दुनिया के सामने वैश्विक तपन की समस्या खड़ी हो गई है। औद्योगीकरण की वर्तमान प्रक्रिया के पूर्व भी कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल बढ़ाने के लिए सदियों से वनों को काटा जाता रहा है लेकिन अब यह कटान ख़तरनाक स्तर पर पहुंच गई है। इससे साबित होता है कि इंसान की प्रकृति पर किसी भी तरह से निर्भरता उसे नकारात्मक रूप में प्रभावित करने वाली है। ऐसे में हमारे सामने वैकल्पिक स्रोत को विकसित करने की ज़रूरत है। क्योंकि वैकल्पिक स्रोत से ही हम विकास की गति को तेज़ कर सकते हैं और पर्यावरण की रक्षा भी कर सकते हैं। यह तथ्य किसी से छिपा नहीं है कि जब भी ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन में कटौती की बात आती है तो विकसित और विकासशील देशों के दो खेमे बन जाते हैं। यह नज़ारा हम हाल ही में कानकुन (मैक्सिको) में जलवायु परिवर्तन पर हुए अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में भी देख चुके हैं। अमरीका और चीन कार्बन उत्सर्जन के मामले में दुनिया में सबसे आगे हैं। उनके लिए ऊर्जा उत्पादन की वैकल्पिक तक़नीक की पहल जितनी मुश्किल हो सकती है उतनी दूसरे देशों के लिए नहीं। फिर भी यह अच्छा संकेत है कि सियोल में अमरीकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने परमाणु कटौती के साथ ही कार्बन उत्सर्जन पर भी गंभीरता दिखाई। इससे उम्मीद की जानी चाहिए कि विकास की दौड़ में पर्यावरण की बढ़ती चुनौतियों से मुक़ाबला करने के लिए विश्व समुदाय एक मंच पर नज़र आएगा। समय की मांग भी है कि इस मुद्दे पर विश्व समुदाय एकजुट हो। जहां तक भारत की बात है कि अब दूसरे कुछ देशों की तरह ही भारत में भी वैकल्पिक स्रोतों को विकसित करने की ज़रूरत है। इन वैकल्पिक स्रोतों से ही भारत तरक़्क़ी की राह पर अग्रसर होगा और विकास के साथ ही पर्यावरण की भी रक्षा हो सकेगी।

भारत में पर्यावरण स्थिरता सूचकांक

इंस्टीट्यूट ऑफ फाइनेंशियल मैनेजमेंट एंड रिसर्च ने पर्यावरण की स्थिति को लेकर भारत के विभिन्न राज्यों का अध्ययन किया था। इसमें पाया गया कि पर्यावरण स्थिरता सूचकांक के मानकों में मणिपुर सबसे आगे है। मणिपुर के बाद क्रमशः सिक्किम, त्रिपुरा, नगालैंड और मिज़ोरम प्रथम पांच राज्यों में शामिल हैं। छत्तीसगढ़, जहां औद्योगीकरण बहुत अधिक है, सातवें स्थान पर है जबकि पंजाब, गुजरात, उत्तर प्रदेश, हरियाणा और राजस्थान सबसे नीचे की पायदानों पर हैं।

ई-क़चरा

सूचना तक़नीक के मौजूदा दौर में दुनिया ई-क़चरे का ढेर बनती जा रही है, जो पर्यावरण को लंबे समय तक और गहरे तक प्रदूषित करने वाला है। यह ई-क़चरा अक्षरणीय प्रदूषक है, लेकिन ये चुनौतियां ऐसी हैं जो केवल मौजूदा व्यवस्था के साथ ही नहीं जुड़ी हैं।

अंतरिक्ष क़चरा

अंतरिक्ष क़चरा पृथ्वी के चारों ओर उसकी कक्षा में एकत्रित मानव निर्मित उपग्रहों, उसके टुकड़ों आदि पदार्थों का संग्रह है, जो अब किसी काम के नहीं रहे। इन क़चरों में अंतरिक्ष से भेजे गए यानों के वे कलपुर्जे भी शामिल हैं, जो सही तरीक़े से काम नहीं कर रहे हैं। रॉकेट के कलपुर्जों के छोटे टुकड़े, उपग्रहों के नष्ट हुए हिस्से आदि भी अंतरिक्ष क़चरा हैं। इनके आपस में टकराने से यानों की कार्यक्षमता पर नकारात्मक असर पड़ता है। इन क़चरों के मानवयुक्त वाहनों से टकराने के भी ख़तरे रहते हैं। सबसे बड़ा ख़तरा यह है कि अंतरिक्ष क़चरे के आपस में टकराने से पैदा होने वाला परावर्तन प्राकृतिक संपदा को नुक़सान पहुंचाता है। अंतरिक्ष क़चरे से विकिरण की समस्या का भी ख़तरा रहता है।

प्लास्टिक क़चरा

प्लास्टिक क़चरा पर्यावरण का सबसे बड़ा दुश्मन बन चुका है, लेकिन सवाल यह भी उठता है कि प्लास्टिक का चलन शुरू होने के पीछे क्या कारण है। जिस तरह से वनों की कटाई हुई और लकड़ी की उपयोगिता कम हुई, उसी गति से प्लास्टिक ने पांव पसारा और आज यह हमारे लिए ख़तरा बन चुका है। प्लास्टिक का आविष्कार 1862 में इंग्लैंड में हुआ, लेकिन अब इसकी सबसे ज़्यादा खपत भारत में हो रही है। चूंकि प्लास्टिक एक कार्बन पदार्थ है इसे बहिष्करण करके सांचे में ढालकर विभिन्न रूप दिया जाता है। इसमें पाए जाने वाले मोनोमर से कैंसर हो सकता है। इसमें पाए जाने वाले नाइलोन के संश्लेषण के लिए बैंजीन कच्चे माल के तौर पर उपयोग होती है। यह भी कैंसर का वाहक है। इसके दुष्प्रभावों को देखते हुए पर्यावरण मंत्रालय ने 40 माइक्रोन से कम की प्लास्टिक पर रोक लगा रखा है।

घटते पेड़, बढ़ता प्रदूषण

वर्ष 2010 में हुए एक सर्वे के मुताबिक पिछले चार सालों में दिल्लीभर में 61 हज़ार 3 सौ 50 पेड़ काटे गए। यही हाल दूसरे स्थानों का भी है। पेड़ तेज़ी से काटे जा रहे हैं, जंगलों को ख़त्म किया जा रहा है, लेकिन पेड़ लगाने की गति न के बराबर है, जो चिंताजनक है।

बीते पांच वर्षों में कुल मिलाकर 2,03,576 हेक्टेयर वन भूमि खनन और औद्योगिक परियोजनाओं में फंसी। बिजली परियोजनाओं की बात करें तो 11वीं पंचवर्षीय योजना के तहत वर्ष 2012 तक 50,000 मेगावाट ताप बिजली उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। वहीं 12वीं योजना में एक लाख मेगावाट अतिरिक्त बिजली उत्पादन का लक्ष्य है। ज़ाहिर है कि ऐसे में तमाम विद्युत परियोजनाओं का विकास होगा। इसमें वन भूमि प्रभावित होगी।

कृषि क्षेत्र में वैकल्पिक स्रोत

भारत में कुल भूमि क्षेत्रफल क़रीब 329 लाख हेक्टेयर है। इसमें खेती क़रीब 144 लाख हेक्टेयर में होती है। भारत में मृदा अपरदन की दर क़रीब 2,600 लाख टन प्रतिवर्ष है। यानी इस मिट्टी को बचाना बेहद ज़रूरी है। क्योंकि तमाम प्रयासों के बाद भी भारत में अभी तक सिर्फ़ 40 फीसदी भूमि ही सिंचित हैं। आंकड़े यह भी बताते हैं कि देश में क़रीब 71 लाख हेक्टेयर भूमि ऊसर है जबकि पूरे विश्व में यह आंकड़ा लगभग 9,520 हेक्टेयर के क़रीब बताया जाता है। जो मृदा ऊसर है, उसे भी खेती योग्य बनाए जाने की ज़रूरत है। आंकड़े बताते हैं कि भारत में वर्ष 1951 में मनुष्य-भूमि अनुपात 0.48 हेक्टेयर प्रतिव्यक्ति था, जो दुनिया के न्यूनतम अनुपातों में से एक था। वर्ष 2025 में यह आंकड़ा घटकर 0.23 हेक्टेयर होने का अनुमान है। ऐसे में मृदा संरक्षण के ज़रिये खेती की एक बड़ी चुनौती से निबटा जा सकता है। कृषि वैज्ञानिक डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन की रिपोर्ट बताती है कि भारत में प्रतिवर्ष क्षरण के कारण क़रीब 25 लाख टन नाइट्रोजन, 33 लाख टन फास्फेट और 25 लाख टन पोटाश की क्षति होती है। इससे जलीय प्रदूषण बढ़ता है। यदि इससे बचा जा सके तो हर साल क़रीब छह हज़ार लाख टन मिट्टी की ऊपरी परत बचेगी और इससे हर साल क़रीब 5.53 लाख टन नाइट्रोजन, फास्फोरस और पोटाश की मात्रा भी बचेगी साथ ही पर्यावरण को भी फायदा होगा। आंकड़े बताते हैं कि अनुकूल परिस्थितियों में मिट्टी की एक इंच मोटी परत जमने में क़रीब आठ सौ साल लगते हैं, जबकि एक इंच मिट्टी को उड़ाने में आंधी और पानी को चंद पल लगते हैं। एक हेक्टेयर भूमि की ऊपरी परत में नाइट्रोजन की मात्रा कम होने से किसान को औसतन तीन से पांच सौ रुपया ख़र्च करना पड़ता है। वायु प्रदूषण बढ़ता है, सो अलग। इसे भी रोकने की ज़रूरत है। संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन की रिपोर्ट में भी यह स्पष्ट हो चुका है कि प्रतिवर्ष 27 अरब टन मिट्टी का क्षरण जल भराव, क्षारीयकरण के कारण हो रहा है। मिट्टी की यह मात्रा एक करोड़ हेक्टेयर कृषि भूमि के बराबर है। खेती योग्य ज़मीन के बीच काफी भू-भाग ऐसा है, जो लवणीय एवं क्षारीय है। इसका कुल क्षेत्रफल क़रीब सात लाख हेक्टेयर बताया जाता है। मिट्टी में सल्फेट एवं क्लोराइड के घुलनशील लवणों की अधिकता के कारण मिट्टी की उर्वरता ख़त्म हो जाती है और पर्यावरण को बड़े पैमाने पर नुक़सान पहुंचता है।

खनिज तत्वों को बचाना ज़रूरी

इसमें कोई संदेह नहीं कि हरित क्रांति के बाद उत्पादन क्षमता में क़रीब तीन से चार गुना बढ़ोतरी हुई है। इसके प्रमुख कारण थे- उन्नत किस्म के बीज का चयन, उर्वरक, कीटनाशक, सिंचाई का सामयिक और पर्याप्त उपयोग आदि। लेकिन इसका एक दुष्परिणाम भी सामने आया, जो हमारे सामने है। अधिक उत्पादन की लालसा में तमाम किसानों ने अंधाधुंध रासायनिक खादों का प्रयोग करना शुरू कर दिया। इससे कुछ समय के लिए उत्पादन तो बढ़ गया, लेकिन मिट्टी की उर्वरा शक्ति कमज़ोर हुई और पर्यावरण प्रदूषण बढ़ा, जो भविष्य के लिए गंभीर चुनौती बन सकता है। क्योंकि मृदा की उर्वरा शक्ति के क्षीण होने का सीधा-सा मतलब है भविष्य में उत्पादन पर बुरा प्रभाव पडना। जब मिट्टी में पोषक तत्व– नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटाश, कैल्शियम, गंधक मैग्नीशियम एवं सूक्ष्म तत्वों में तांबा, लोहा, जस्ता, बोरान आदि नहीं होंगे तो पौधे का पूर्ण रूप से विकास नहीं होगा। इसके तहत पोषण प्रबंधन पद्धति, एकीकृत जल प्रबंधन, एकीकृत बीज प्रबंधन, एकीकृत कीट प्रबंधन आदि पर विशेष रूप से ध्यान देने की ज़रूरत है।

पर्यावरण प्रदूषण रहित विभिन्न ऊर्जा स्रोत

विकल्प बनेगा भी-तापीय ऊर्जा

जिओथर्मल यानी भू-तापीय ऊर्जा पृथ्वी

से प्राप्त की जाती है। यह प्रदूषणरहित ऊर्जा का प्रमुख स्रोत है। पृथ्वी के गर्भ में गैम्मा, यूरेनियम और थोरियम जैसे पदार्थ भारी मात्रा में पाए जाते हैं। इनका उपयोग नहीं होने से ये निरर्थक रहते हैं। पृथ्वी में संग्रहीत कुल ताप 1,031 जूल है। यह ताप संचालन के द्वारा 44.2 टेरावाट की दर से पृथ्वी की सतह पर आता है। पृथ्वी को लगातार क़रीब 30 टेरावाट की दर से होने वाले रेडियो सक्रिय क्षरण के द्वारा यह ताप दोबारा प्राप्त होता रहता है। ऐसे में इसका उपयोग करने से किसी तरह का नुक़सान भी नहीं है। अत: इसका उपयोग बिजली उत्पादन में किया जा सकता है। दुनिया के क़रीब 20 देश भू-तापीय ऊर्जा के जरिये एक तरफ जहां बिजली प्राप्त कर रहे हैं वहीं पर्यावरण को भी बचा रहे हैं। आइसलैंड जैसा छोटा देश अपनी पूरी ऊर्जा का क़रीब 17 फीसदी हिस्सा इसी प्रणाली से हासिल कर रहा है। वैज्ञानिकों की मानें तो भू-तापीय प्रवणता के उपयोग से तापीय ऊर्जा का सतत प्रवाह होता रहता है। इस ऊर्जा का प्रयोग पुरापाषाण युग में पानी गर्म करने और रोमन काल में किया जाता था। भारतीय भूगर्भ सर्वेक्षण ने देश में क़रीब तीन सौ स्थानों के बारे में पता लगाया है, जहां सतह के कुछ ही गहराई पर तापमान क़रीब 35 डिग्री से 9.8 डिग्री तक पाया गया है। इन क्षेत्रों में भू-तापीय ऊर्जा के दोहन की अपार संभावनाएं हैं। वैज्ञानिकों की ओर से जिन स्थानों का सर्वेक्षण किया गया है, उसमें प्रमुख रूप से हिमालयी भू-तापीय क्षेत्र, नगा-लुसाई भू-तापीय क्षेत्र, अंडमान निकोबार द्वीपसमूह भू-तापीय क्षेत्र, सोन-नर्मदा तापी गार्डन, पश्चिमी तट, दामोदर घाटी, महानंदा घाटी, गोदावरी घाटी आदि क्षेत्र हैं। हालांकि भारत सरकार ने इस दिशा में काफी गंभीरता दिखाई है और भू-तापीय ऊर्जा नीति भी लागू कर दी है। इसके ज़रिये सरकार भू-तापीय ऊर्जा दोहन की तक़नीक के विकास को बढ़ावा देगी। यदि भारत में भू-तापीय ऊर्जा तक़नीक अपनाई जाती है तो जहां पर्यावरण प्रदूषण रुकेगा वहीं 2 हज़ार गीगावाट तक बिजली उत्पादन किया जा सकेगा। इस तक़नीक से बिजली पैदा करने के साथ ही उष्म पंप तक़नीक के ज़रिये भी भू-तापीय ऊर्जा हमारी ज़रूरतों को पूरा करेगी। उष्म पंप के लिए गर्म जल भंडार की ज़रूरत नहीं होती है। इसके लिए धरती के अंदर बस एक पाइप डाली जाती है। इसका सबसे ज़्यादा फायदा किसानों को मिलेगा। कृषि कार्य में बिजली संकट दूर होगा। अमरीका के ओरेगन शहर में भू-तापीय ऊर्जा के ज़रिये ही तमाम कल-कारखाने चल रहे हैं। विश्वभर में भू-तापीय ऊर्जा के मामले में अमरीका अकेले 2,700 मेगावाट ऊर्जा प्राप्त कर रहा है। जिन स्थानों पर पानी की मात्रा पर्याप्त है, वहां के लिए यह प्रदूषणरहित सबसे कारगर विकल्प हो सकता है।

पवन ऊर्जा को विकसित करने की ज़रूरत

पर्यावरण प्रदूषण को देखते हुए एक बार फिर पवन ऊर्जा तक़नीक अपनाने की ज़रूरत महसूस की जा रही है। तेज वायु के दबाव से पवन चक्की को चलाते हैं तो पवन चक्की से बिजली पैदा होगी। इससे बिजली उत्पादन के लिए अपनाए जाने वाले दूसरे साधनों पर निर्भरता कम होगी। कोयले की खपत कम होगी और जल एवं वायु प्रदूषण रुकेगा। आमतौर पर पवन ऊर्जा का प्रयोग रेगिस्तानी, तटीय एवं पर्वतीय क्षेत्रों में किया जाता है। फिलहाल भारत में पवन ऊर्जा तक़नीक से क़रीब 1,257 मेगावाट बिजली पैदा की जा रही है। पवन ऊर्जा जेनरेटर पर महाराष्ट्र में मई 2007 में प्रयोग किया गया। यहां पर तीन वायु टरबाइन जेनरेटर हैं और क़रीब 3.75 मेगावाट बिजली उत्पादन हो रहा है। इसी तरह राजस्थान के जैसलमेर में लगी पवन ऊर्जा टरबाइन से 21.25 मेगावाट बिजली का उत्पादन हो रहा है। यहां से पैदा होने वाली बिजली से विभिन्न जिलों में बिजली आपूर्ति की जा रही है। पर्यावरण प्रदूषण बचाने में पवन ऊर्जा को सबसे कारगर उपाय माना जाता है। यही वज़ह है कि पवन ऊर्जा के मामले में ब्रिटेन दुनिया में सबसे आगे है। चीन, स्पेन, अमरीका में भी पवन ऊर्जा के क्षेत्र में तेज़ी से विकास हो रहा है। भारत में भी इसकी गति बढ़ाने की ज़रूरत है।

बायोगैस

विभिन्न तरह की मृतप्राय वनस्पतियों एवं हमारे आसपास मौजूद क़चरे को भी हम ऊर्जा के रूप में इस्तेमाल कर सकते हैं। इससे प्रदूषण कम होगा साथ ही हमारी ज़रूरतें भी पूरी होंगी। अक्सर हमारे घरों में भूसा, डंठल, पशुओं के गोबर, रसोई के अपशिष्ट आदि होते हैं। इनका इस्तेमाल हम बायोगैस तैयार करने में कर सकते हैं। ग्रामीण इलाक़ों में यह बहुत ही कारगर विकल्प है। बायोगैस का इस्तेमाल भोजन पकाने, तापन, रोशनी के लिए एवं कुछ इंजनों में मोटिव पावर पैदा करने में किया जाता है। फिलहाल भारत बायोगैस उत्पादन के मामले में दुनिया में दूसरे स्थान पर है। फिर भी बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण और विकास की दौड़ में कम होते दूसरे संसाधनों को देखते हुए इसे और विकसित किए जाने की ज़रूरत है। गोबर गैस अथवा बायोगैस से बायोमास विद्युत उत्पादन, बायोमास गैसीकरण द्वारा तापीय और विद्युत अनुप्रयोग किया जा सकता है। भारत में हर साल क़रीब नौ करोड़ यूनिट से ज्यादा बिजली गोबर गैस से पैदा की जा रही है। शहरी और औद्योगिक अपशिष्टों से क़रीब 3,500 मेगावाट ऊर्जा उत्पादन हो रहा है। लेकिन यह ज़रिया पर्यावरण हितैषी नहीं है क्योंकि बायोगैस और बायोमास के द्वारा ऊर्जा उत्पादन से पैदा होने वाली गैसें वायुमंडल में प्रदूषण भी फैला रही हैं।

सौर ऊर्जा

विकास की दौड़ में अन्य तक़नीकों पर बढ़ते ख़र्च और प्रदूषण को देखते हुए इन दिनों सौर ऊर्जा पर विशेष ज़ोर दिया जा रहा है। सूर्य से मिलने वाली ऊर्जा को संरक्षित करके हम उसका सदुपयोग कर सकते हैं। सौर ऊर्जा सौर विकिरण के माध्यम से संचयित की जाती है। भारत में सूर्य की रोशनी पर्याप्त मात्रा में मिलती है। इसका औसत प्रतिवर्ष क़रीब तीन सौ दिन है। ऐसे में यह सबसे उपयुक्त माध्यम है। ख़ासतौर से रेगिस्तानी इलाक़े में यह काफी कारगर साबित हो रहा है। सौर ऊर्जा के लिए राजस्थान में विभिन्न सौर प्लेटों से उत्पन्न ऊर्जा से पहले टरबाइन चलाया जाता है और फिर बिजली पैदा की जाती है। भारत के अलावा अमरीका, अल्जीरिया और मोरक्को में बड़े पैमाने पर सौर ऊर्जा का प्रयोग किया जा रहा है। भारत में सौर ऊर्जा का उत्पादन क़रीब 71 मेगावाट है। यहां क़रीब 70 हज़ार फोटोवोल्टिक प्रणालियों, ढाई हज़ार से अधिक सौर पंपसेट, पांच लाख सौर लालटेन, ढाई लाख घरेलू प्रकाश व्यवस्था एवं चार लाख से अधिक पथ प्रकाश व्यवस्था सौर ऊर्जा पर आधारित तैयार की गई है। ❑

(लेखक जयपुर स्थित स्वतंत्र पत्रकार हैं।
ई-मेल : chandrabhan0502@gmail.com)

हिन्दी माध्यम TARGET - 2012 मुख्य परीक्षा कार्यक्रम

लोक प्रशासन

by

ABHAY KUMAR

एक बार फिर सिविल सेवा 2010–11 की परीक्षा में संस्थान के अंतिम रूप से सफल छात्रों की संख्या 100 से अधिक है जिनमें ...

पुलकित खरे

जैन मेहुल भारत

सत्य नारायण ताखर

सुनील जोशी

सोनिका

राजेश कुमार

इत्यादि...

''मैंने लोक प्रशासन, निबंध और साक्षात्कार के लिए 'सिनर्जी' संस्थान से मार्गदर्शन प्राप्त किया इस दौरान अभय कुमार सर की अवधारणात्मक स्पष्टता, केस अध्ययन की पकड़ तथा प्रभावी संप्रेषण शैली के कारण मैं मुख्य परीक्षा में अत्यधिक प्रभावी निष्पादन कर सका साथ ही अवधारणाएं स्पष्ट होने के कारण साक्षात्कार में हुए प्रश्नों का उत्तर भी सहजता से दे सका। साथ ही अभय सर की गूढ़ एवं गंभीर अवधारणाओं को भी सरल, तार्किक एवं वैज्ञानिक रूप से प्रस्तुत करने की उनकी शैली ने, मेरे आत्मविश्वास को बढ़ाया तथा विषय की एक स्पष्ट समझ विकसित करने में मेरी मदद की।''

मनोज कुमार

Rank - 1st (RAS EXAM-2010)

सिविल सर्विस क्रॉनिकल व प्रतियोगिता दर्पण अक्टूबर–2011

ग्रीष्म कालीन सत्र हेतु नये बैच के लिये

10 मई, 2012 से नामांकन प्रारम्भ

लोक प्रशासन का सर्वश्रेष्ठ संस्थान...

प्रतिबद्ध कक्षा कार्यक्रम...

अतुलनीय व परिष्कृत अध्ययन सामग्री

उत्तर लेखन पर विशेष बल....

नए विद्यार्थियों के लिए व्यक्तिगत मार्गदर्शन

आएँ... नोट्स देखें... तुलना करें... अंतर स्पष्ट है।

पत्राचार की सुविधा उपलब्ध

SYNERGY

AN INSTITUTE FOR CIVIL SERVICES EXAMINATION

Address : 102, 1st Floor, Manushree Building, Behind Post Office, Mukherjee Nagar, Delhi-9

Ph: . **965 068 2121, 999 018 8537, 011-276 545 18, 276 534 94,**

YH-21/2012

राष्ट्रीय कौशल विकास निगम

- **राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी) का तात्पर्य क्या है?**

राष्ट्रीय कौशल विकास निगम (एनएसडीसी) कौशल विकास के प्रशिक्षण के ज़रिये भारतीय श्रम शक्ति को कौशल विकास और उन्नयन की सुविधा प्रदान करने वाली देश में सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र की सहभागिता (पीपीपी) की अपने तरह की अनूठी संस्था है। एनएसडीसी का गठन देश के विभिन्न क्षेत्रों में कुशल जनशक्ति की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन के एक अंग के रूप में किया गया था। संगठन के प्रयासों का एक बड़ा भाग निजी क्षेत्र की ओर लक्षित है और देश के असंगठित क्षेत्र में कौशल विकास पर ध्यान देता है। एनएसडीसी कौशल विकास और प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए धन मुहैया कराकर विशेषत: असंगठित क्षेत्र में कौशल विकास के प्रयासों का सहारा देता है। यह पक्ष प्रस्तुत करने (पैरवी करने) और प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी हाथ बंटाता है, भारतीय श्रमशक्ति में कौशल की कमी का पता लगाने हेतु गहराई से अध्ययन करता है और अधिमान्यता के मानक तय करता है। एनएसडीसी का उद्देश्य कौशल विकास के कार्यक्रमों में निजी क्षेत्र के प्रयासों को बढ़ावा देकर तथा संभावित अंतर को पूरा करने के लिए धन प्रदान कर देश में कुशल श्रम शक्ति के अभाव को दूर करना है। लक्ष्य है कि भारत में 2022 तक 50 करोड़ कुशल श्रमशक्ति में से लगभग 30 प्रतिशत की पूर्ति एनएसडीसी के माध्यम से हो सके।

- **एएसडीसी जैसे संगठन की आवश्यकता क्यों है?**

भारत जैसी उभरती अर्थव्यवस्था को बड़े पैमाने पर कुशल श्रमशक्ति की आवश्यकता है। परंतु उच्चस्तरीय प्रशिक्षण संस्थानों और सुयोग्य प्रशिक्षकों के अभाव के कारण विकास प्रभावित हो रहा है। कुशलता का अभाव अर्थव्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र में दिखाई देता है। एनएसडीसी विभिन्न क्षेत्रों में कुशल और हुनरमंद श्रमशक्ति की मांग और आपूर्ति के अंतर को पाटने का प्रयास कर रहा है। यह कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रमों के लिए धन प्रदान करता है। मुख्य उद्देश्य कौशल विकास और प्रशिक्षण कार्यक्रमों में निजी क्षेत्र की भागीदारी को बढ़ाना है। एनएसडीसी कंपनी अधिनियम की धारा 25 के अंतर्गत वित्त मंत्रालय द्वारा स्थापित बिना किसी लाभ के लिए काम करने वाली कंपनी है। इसकी आधारभूत पूंजी ₹ 10 करोड़ की है, जिसमें 49 प्रतिशत भागीदारी भारत सरकार की है।

निगम का ढांचा दो स्तरीय है–12 सदस्यीय संचालक मंडल और राष्ट्रीय कौशल विकास कोष (एनएसडीएफ) 100 प्रतिशत सरकार के स्वामित्व वाला ट्रस्ट जो एनएसडीसी के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए गठित किया गया है।

- **एनएसडीसी का प्रबंधन कौन करता है?**

एनएसडीसी का प्रबंधन अनुभवी पेशेवरों की एक टीम करती है। बोर्ड, बोर्ड की उप समितियां और कार्यकारी परिषद के स्तरों पर निर्णय लेने वाला इसका ढांचा है जो रणनीति तैयार करने और उस पर प्रभावी ढंग से काम करने में संगठन की सहायता करते हैं।

- **एनएसडीसी किन क्षेत्रों को अपनी सेवाएं देता है?**

एनएसडीसी 21 क्षेत्रों को सेवाएं प्रदान करता है, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं :

- वाहन/वाहन कलपुर्जे
- इलेक्ट्रॉनिक्स/हार्डवेयर
- वस्त्र और सिले-सिलाए कपड़े
- भवन निर्माण
- खाद्य प्रसंस्करण
- सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) अथवा सॉफ्टवेयर
- मीडिया, मनोरंजन, प्रसारण, सामग्री सृजन, एनीमेशन
- स्वास्थ्य सेवाएं
- बैंकिंग/बीमा और वित्त
- शिक्षा/कौशल विकास
- असंगठित क्षेत्र

- **एनएसडीसी की क्या भूमिका है?**

एनएसडीसी की प्रमुख भूमिकाएं हैं :

- धन मुहैया कराना और प्रोत्साहन देना तथा
- सहायक सेवाओं को आकार देने और सृजन में मदद करना।

एनएसडीसी कौशल विकास के नियत क्षेत्र में स्वयं नहीं उतरेगा, बल्कि वह इस क्षेत्र में प्रयासों को या तो बढ़ावा देगा या उनके लिए सुविधाएं प्रदान करेगा। ऐसा करते समय वह कौशल विकास के सभी पहलुओं में उद्योगों को भी शामिल करेगा। प्रयास यह होगा कि अनेक प्रयासों को स्वयं अपने हाथ में लेने अथवा वर्तमान प्रयासों को दोहराने के बजाय

तमाम हितग्राहियों के साथ सहभागिता बढ़ाई जाए।

लगभग 15 करोड़ लोगों को विभिन्न प्रकार के हुनर सिखाने अथवा उनके हुनर के विकास के लिए आवश्यक प्रयासों को आगे बढ़ाने के लिए एनएसडीसी–

– अत्यंत कम लागत, उच्च गुणवत्ता और नवाचारी व्यापार पद्धतियों का विकास करेगा;
– पर्याप्त निवेश आकर्षित करेगा;
– सुनिश्चित करेगा कि इसका पैसा घूम-फिरकर इसी व्यवसाय में लगा रहे, यानी अनुदान के स्थान पर ऋण अथवा अंशपूंजी के रूप में लगाया जाए;
– अपने लिए अपेक्षित शक्ति प्राप्त करेगा और
– एक ठोस संगठन तैयार करेगा।

इसे ध्यान में रखते हुए एनएसडीसी तीन प्रमुख भूमिकाएं निभाएगा :

वित्त पोषण एवं प्रोत्साहन : इसकी यह भूमिका सबसे प्रमुख है। इसमें ऋण अथवा अंशपूंजी के रूप में पैसे का प्रबंध करना शामिल होता है। करों में छूट आदि के माध्यम से वित्तीय संभावनाएं सुधारने के लिए निजी क्षेत्र के प्रयासों के चयन में अनुदान और वित्तीय प्रोत्साहन देना इसी का एक हिस्सा है। वित्त पोषण की सही प्रकृति (हिस्सेदारी, ऋण, अनुदान) क्षेत्र के आकर्षण अथवा संभाव्यता पर निर्भर करेगी और कुछ हद तक उद्यमी के प्रकार (लाभ के उद्देश्य वाला निजी, बिना लाभ के इरादे का उद्योग संघ अथवा बिना लाभ के इरादे वाला गैर सरकारी संगठन) पर भी निर्भर करेगी। कालांतर में एनएसडीसी का प्रयास होगा कि वह सुदृढ़ व्यावहारिक व्यापार के मॉडल विकसित कर सके और अनुदान दाता की भूमिका में कमी आए।

सहायक सेवाओं को आगे बढ़ाना : किसी कौशल विकास संस्थान के सुचारू संचालन के लिए पाठ्यक्रम, शिक्षक समुदाय और उनके प्रशिक्षण, मानक और गुणवत्ता का भरोसा, प्रौद्योगिकी मंच, छात्रों को रोज़गार के उचित अवसर प्रदान करने की व्यवस्था जैसी अनेक बातों की आवश्यकता होती है। इन सहायक सेवाओं में से कुछ के लिए एनएसडीसी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। उसका पहला महत्वपूर्ण काम उद्योग संघों के साथ मिलकर मानकों का निर्धारण और अधिमान्यता प्रणालियों की स्थापना करना होगा।

आकार देना : सबसे पहले तो एनएसडीसी कौशल विकास के प्रयासों में निजी क्षेत्र की बड़े पैमाने पर भागीदारी के लिए सक्रियता से काम करेगा, उनको तैयार करेगा और उसमें गतिशीलता बनाए रखेगा। एनएसडीसी महत्वपूर्ण कौशल समूहों की पहचान करेगा, कौशल विकास की पद्धति का विकास करेगा और संभावनायुक्त उद्यमियों को आकर्षित करेगा तथा इन सब प्रयासों का समर्थन करेगा।

एनएसडीसी के ध्यानार्थ क्षेत्र

कौशल विकास : सन् 2022 तक 50 करोड़ लोगों को हुनर सिखाने और उनके कौशल के विकास की चुनौती के लिए प्राथमिक, माध्यमिक और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में बुनियादी और पूरक कौशल के विस्तार की आवश्यकता होगी। प्रारंभ में, एनएसडीसी पूरक कौशल विकास पर ध्यान केंद्रित करेगा और शिक्षा प्रणाली में सुगम रास्ते तैयार करने का प्रयास करेगा।

निजी क्षेत्र के प्रयासों को अपनाना: पूरक कौशल विकास को सुदृढ़ बनाने में एनएसडीसी निजी क्षेत्र के प्रयासों को अपनाएगा। इनमें बिना लाभ के इरादे वाले और लाभ के लिए किए जाने वाले प्रयास, दोनों ही शामिल होंगे।

एनएसडीसी लक्षित क्षेत्रों को ध्यान में रखते हुए निजी क्षेत्र के समर्थन के लिए विभेदीकृत दृष्टिकोण अपनाएगा। कौशल समूह की मांग और छात्र समुदाय की आय के स्तर पर आधार पर एनएसडीसी तीन क्षेत्रों पर ध्यान केंद्रित करेगा :

- **आकर्षक क्षेत्र :** यह देखते हुए कि बाज़ार स्वत: काम कर रहा है, एनएसडीसी केवल प्रतिक्रियात्मक भूमिका अदा करेगा और विभिन्न उद्यमों के आगे बढ़ने के प्रयासों में मदद करेगा।
- **संभाव्य क्षेत्र :** सीमित आर्थिक संभावनाओं वाला अथवा उच्च जोखिम/अनिश्चितता वाला क्षेत्र। निजी निवेश के लिए इसे और अधिक आकर्षक बनाने के लिए एनएसडीसी को प्रारंभ में इस क्षेत्र पर विशेष ध्यान देना होगा।
- **पूर्णतया असंभाव्य क्षेत्र :** कालांतर में, एनएसडीसी सरकारी विभागों के सहयोग से इस क्षेत्र में काम करना चाहेगा और नवाचारी व्यापार पद्धतियों के विकास में मदद करेगा ताकि इस क्षेत्र के उद्यमी संभाव्य क्षेत्र की ओर जा सकें। ❑

अपने लेख हमें ई-मेल करें

आप हमें अपने लेख और पत्र ई-मेल भी कर सकते हैं। ई-मेल करने के लिए कृतिदेव फांट इस्तेमाल करें और वर्ड ओपन फाईल exeed.yojana@gmail.com अथवा yojanahindi@gmail.com पर भेजें। एक से अधिक लेखकों के नाम केवल विशेष शोध लेखों पर ही दें। जिन रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा वे स्वीकार नहीं की जा सकेंगी। रचना के प्रकाशन के संबंध में किसी प्रकार का पत्र-व्यवहार अथवा फोन न करें। विशेष अवसरों के लिए लेख तीन माह पूर्व प्राप्त हो जाने चाहिए। रचनाओं के साथ यथासंभव प्रासंगिक चित्र भी भेजें। डाक से भेजे जाने वाले लेखों की एक प्रति सीडी में भी भेजें। वापसी के लिए कृपया टिकट लगा और पता लिखा लिफ़ाफ़ा संलग्न करें।

– वरिष्ठ संपादक

साड़ी का बार्डर बुनने का स्वचालित बाना

पचास वर्षीय भानुमूर्ति सूती हथकरघा साड़ियों के ऐसे बुनकर हैं जो प्राय: नये प्रयोग करते रहते हैं। उन्होंने मौजूदा हथकरघा प्रणाली में एक ऐसा उपस्कर (अटैचमेंट) लगाने में सफलता प्राप्त की है जिससे साड़ियों के बार्डर (किनारी) की बुनाई के दौरान बाने को आसानी से ताने के साथ जोड़ा जा सकता है।

पांच भाई-बहनों में सबसे बड़े भानुमूर्ति का बचपन कठिनाइयों में बीता। उनके माता-पिता ने दो जून की रोटी का इंतजाम करने के लिए कड़ा संघर्ष और परिश्रम किया। उनके पास दो करघे थे, जिनपर दोनों कड़ा परिश्रम करते ताकि परिवार का पेट भर सकें। भानुमूर्ति जब 13 वर्ष के थे, उनकी मां का निधन हो गया, जिसके कारण उन्हें अपनी पढ़ाई बीच में ही छोड़कर परिवार की मदद के लिए पुश्तैनी व्यवसाय अपनाना पड़ा। उन्होंने भी बुनकर बनकर पिता के काम में हाथ बटाना शुरू कर दिया। सोलह वर्ष की आयु में वे अपने परिवार के लिए रोटी कमाने लगे।

1977 में विवाह के बाद वे अलग रहने लगे और अपना स्वयं का कार्य शुरू किया। उन्हें चेन्नई से काम मिलने लगा और जैकार्ड बॉक्स के इस्तेमाल से वे सूती साड़ियां, जैकेट का कपड़ा, चूड़ीदार सेट आदि बनाने लगे।

उत्पत्ति

पारंपरिक रूप से गांव के सभी बुनकर पुराने तरीक़े से ही बुनाई करते थे। उन्हें कोरावई करघे पर बुनाई करना नहीं आता था। कोरावई अथवा विषम बुनाई काफी बारीक़ और जटिल होती है जिसकी डिज़ाइन और रंग प्राय: साड़ी के मुख्य भाग के कपड़े से भिन्न होते हैं। इसमें तीन शटल (भरनी) लगती है। दो से बुनकर स्वयं काम करता है और तीसरे के लिए एक सहायक की आवश्यकता होती है।

भानुमूर्ति को चेन्नई से जो काम मिल रहा था, उसे लेकर वह संतुष्ट थे। वे अपने ग्राहकों को हमेशा ही नयी-नयी डिज़ाइनों की साड़ियां की आपूर्ति करते रहते थे तथा अपनी उत्पादकता बढ़ाने के प्रयास में जुटे थे। वे चाहते थे कि कोरावई बार्डर स्वत: भराई कार्य करने लगे ताकि सहायक की आवश्यकता ही नहीं पड़े। कुछ महीनों के परिश्रम और प्रयोग के बाद 1985 में उन्होंने एक ऐसा स्वचालित उपकरण विकसित किया जिसपर केवल सरल कोरावई बुनाई ही हो सकती थी।

उनका बेचैन मन इस सफलता से ही संतुष्ट नहीं हुआ और वे पूर्णत: स्वचालित कोरावई करघे के निर्माण का प्रयास करते रहे। तीन माह के अथक प्रयास के बाद 1992 में उन्हें यह सफलता मिली। इस मशीन से वे साड़ी का मुख्य भाग और बार्डर एक साथ ही बनाने में कामयाब हुए। साथ ही एक लाभ और हुआ कि वे 1 इंच से लेकर 15 इंच चौड़ा बार्डर बुन सकते थे। इसके अतिरिक्त सुधरे हुए कोरावई हथकरघे की तरह सभी प्रकार के पांच रेक्क यथा- तजम्पू रेक, शीट रेक, पिल्लैयार मोकू आदि भी इस मशीन पर बुने जा सकते हैं।

नवाचार

भानुमूर्ति ने अपने करघे में जो स्वचालित प्रणाली लगाई है वह कुछ-कुछ अमरीका के कैच कॉर्ड तकनीक (यूएस पेटेंट 4616680, 1984) जैसी है। हालांकि जब भानुमूर्ति ने अपनी प्रणाली विकसित की, उन्हें इस बात का ज्ञान नहीं था। इसमें किसी सहायक की आवश्यकता नहीं होती, परंतु उत्पादकता बढ़ जाती है।

इस तकनीक में टेम्पुल बार्डर (मंदिर जैसी डिजाइन वाली किनारी) की बुनाई के लिए कई धागों को एक साथ लेने का काम करने वाली 'मल्टी कैच कार्ड्स' तकनीक का उपयोग किया जाता है। टेम्पुल बार्डर में जितनी चौड़ाई की आवश्यकता होती है कैच कार्ड की संख्या उसी के बराबर होती है। टेम्पुल बार्डर का प्रत्येक चरण पृथक कैच कार्ड द्वारा नियंत्रित होता है और इसे अलग-अलग डॉबी अथवा जेकार्ड द्वारा चलाया जाता है। इस तकनीक में प्रत्येक इंच में जो ताना-बाना होता है वह साड़ी के मुख्य भाग के ताने-बाने के बराबर ही होता है। इस तकनीक में 'तीन/दो कट शटल' की आवश्यकता नहीं होती और इसलिए अतिरिक्त व्यक्ति की भी जरूरत नहीं रह जाती। टेम्पुल बार्डर की बुनाई क़दम-दर-क़दम आगे बढ़ती जाती है और डॉबी अथवा जेकार्ड के माध्यम से विभिन्न स्थानों पर रखे गए कैच कॉर्ड के चलने से टेम्पुल बार्डर स्वत: आकार लेते हुए बनता जाता है। इससे डिजाइन में समानता और एकरूपता बनी रहती है तथा बुनकर की शारीरिक और मानसिक थकावट भी कम हो जाती है। पारंपरिक 3 कट शटल बुनाई की तुलना में इस नवीन तकनीक से उत्पादकता में वृद्धि होती है।

भानुमूर्ति ने इस तरह का यंत्र मदुरई जिले के रामनाथपुरम में लगाया है और 'सेवा' की सहायता से 15 महिला बुनकरों को प्रशिक्षित भी किया है। कुछ वर्ष पहले तक इस गांव में 300 परिवार हथकरघा बुनाई का काम करते थे, परंतु अपर्याप्त आय के कारण क़रीब 200 परिवार पड़ोस में तिरुपुर के होजियरी कारखाने में मज़दूरी करने लगी।

इस नये यंत्र के लगने के बाद लोगों से अच्छी प्रतिक्रिया मिली है और उन्हें आशा है कि जो लोग गांव छोड़कर चले गए हैं वे वापस आएंगे और अपनी पुश्तैनी व्यवस्था को अपनाएंगे।

भारतीय हथकरघा प्रौद्योगिकी संस्थान ने इस तकनीक की सराहना की है और सलाह दी है कि हथकरघा संकुलों (क्लस्टरों) में इसे अपनाया जाना चाहिए। जिन संकुलों में टेम्पुल बार्डर वाली साड़ियों का निर्माण होता है, वहां यह विशेष रूप से उपयोगी हो सकती है। कर्नाटक का ज्ञान (जीआईएएन) प्रकोष्ठ तुमकुर के एसएसआईटी के तकनीकी शिक्षा स्तर सुधार कार्यक्रम (टीईक्यूआईपी) के तहत कर्नाटक क्षेत्र के हथकरघा बुनकरों का एक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाना चाहता है। इस नवीन प्रयोग और बुनकर समाज के प्रति योगदान के लिए भानुमूर्ति को 2006 में 'सृष्टि' पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। ❑

卐 ॐ सांई राम 卐

मैथिली

द्वारा डा० शेखर झा

- IAS 2011 Mains में 42% रिजल्ट के साथ लगातार 6 वर्षो से सर्वश्रेष्ठ विषय। Mains में हमारे 19/30 Result
- हिन्दी लिखना–पढ़ना जानने वालों के लिए सर्वाधिक सरल और अंकदायी विषय। मैथिली में 90% शब्द हिन्दी के है।
- हमारे यहां मैथिली लेखन प्रशिक्षण की विशेष व्यवस्था के साथ कक्षा दी जाती है। अब तक औसत अंक 325/600

60 days classroom programme with Innovative 30 tests

New Batches on 24th May, 12th June,

31st July, 9th August, 5th Sep., 31st Oct., 23rd Nov., 14th Dec., 5th Jan.

24th May batch Timing : Old Rajender Nagar at 9 a.m., Mukherjee Nagar at 4 p.m.

All batches in Old Rajender Nagar & Mukherjee Nagar

Sociology/समाजशास्त्र

by **Aditya Choudhary** (Prominent Writer & Editor of Socio. Books)

Batches 24th May 8.30 a.m. English Medium
10.30 a.m. हिन्दी माध्यम [Mukherjee Nagar]

Other Batches 12th June, 31st July & 9th August 31st October 14th Dec.

Test Series for 2012 Mains सामान्य अध्ययन, **Soc.**, मैथिली

Model Answer और कक्षा विश्लेषण के साथ

मंथन IAS ACADEMY™

HDFC Bank के उपर

204, IIIrd Floor, (Back Side) Mukherjee Nagar, Delhi-9

8527345701, 011-3192123

9968548859

YH-24/2012

झरोखा जम्मू-कश्मीर का

भारत का सबसे लंबा सुरंग मार्ग

● ममता सैनी

कश्मीर का दुर्गम रास्ता शीघ्र ही गुज़रे जमाने की बात हो जाएगी। श्रीनगर में निर्माणाधीन एक रास्ता न केवल राज्य के दोनों क्षेत्रों को और पास ले आएगा, बल्कि इससे घाटी का शेष देश के साथ अलगाव भी समाप्त हो जाएगा। राज्य के पीर पंजाल पहाड़ियों से होकर अनेक आधुनिक सुरंगों का निर्माण किया जा रहा है। सड़क मार्ग के अतिरिक्त महत्वाकांक्षी रेल परियोजना के लिए भी सुरंग की खुदाई ज़ोरों से चल रही है। दोनों ही सुरंगें घाटी में प्रवेश को सुगम बना देंगी।

रेलवे जहां 9 किलोमीटर लंबी सुरंगों का एक व्यापक नेटवर्क तैयार करने की योजना बना रहा है, वहीं भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने मौजूदा राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 44 के उन्नयन की परियोजना हाथ में ली है। जम्मू को श्रीनगर से जोड़ने वाले इस राजमार्ग को चार लेन का बनाया जा रहा है। इस परियोजना के अंतर्गत दो बड़ी सुरंगों का निर्माण हो रहा है। इन सुरंगों के निर्माण से दोनों शहरों के बीच की 288 किलोमीटर की दूरी सिमटकर 238 किलोमीटर रह जाएगी। दस घंटे की यात्रा कुल पांच घंटे की रह जाएगी। इन सुरंगों के बन जाने के बाद यात्रियों को खूनी नाला जैसे मुश्किल रास्ते से नहीं गुज़रना पड़ेगा, जहां बंदूक की गोली की रफ़्तार से गिरने वाले पत्थर लोगों के लिए जान का जोख़िम बने रहते हैं। इस साल जनवरी और फरवरी के बीच अब तक इस स्थान पर 10 लोगों की जान जा चुकी है।

दोनों सुरंगें बर्फ़बारी के कारण यातायात में होने वाले व्यवधान की समस्या का भी निराकरण कर देंगी। जाड़ों में बर्फ़बारी के कारण कई-कई दिनों तक यातायात बंद रहता है। चेनानी-नश्री सुरंग शिवालिक पर्वतश्रृंखला की मुरी पहाड़ियों के बीच खोदी जा रही है। सुरंग बनाने के लिए विस्फोटकों का इस्तेमाल किया जा रहा है। पाकिस्तान के मुरी गांव से शुरू हुई इन पहाड़ियों की ऊंचाई करीब 1.2 किलोमीटर है, जिसका सीना काटकर 9 किलोमीटर लंबी सुरंग का निर्माण किया जा रहा है। वर्ष 2016 में पूरी होने वाली यह सुरंग देश की सबसे लंबी सुरंग होगी। इस समूची परियोजना पर 10,600 रुपये की लागत आने का अनुमान है।

प्रस्तावित दो लेन वाली सुरंग वाला मार्ग पटनी टॉप पर्यटक स्थल और नगरोदा के ढलानदार रास्ते से अलग हटकर बनाया जा रहा है। इसके टेढ़े-मेढ़े रास्तों, कठिन मोड़ों और खड़ी चढ़ाई/ढलान के कारण ट्रक चालक इससे गुज़रना पसंद नहीं करते, जिसे देखते हुए राज्य सरकार ने इसे अयोग्य घोषित कर दिया है। ट्रक चालकों का कहना है कि इस मार्ग के बन जाने से समय और ईंधन की बचत तो होगी ही, गाड़ियों के रखरखाव के ख़र्च में भी काफी बचत होगी। एक दिलचस्प तथ्य यह है कि दोनों सुरंगों के साथ-साथ बचाव मार्ग भी बनाए जा रहे हैं। बर्फ़ीले तूफान और बर्फ़बारी के समय इनमें से होकर छुपा/निकला जा सकता है। बनिहाल और काजीगुंड के बीच

1.8 किलोमीटर की ऊंचाई पर बनाए जा रहे रास्तों पर बर्फ़बारी से छुटकारा तो नहीं मिलेगा, परंतु विशेषज्ञों का कहना है कि दो लेन वाले मार्ग की अपेक्षा चार लेन वाले मार्ग से बर्फ हटाना ज़्यादा आसान होगा।

इसके अलावा, पहाड़ों की चढ़ाई बिल्कुल खड़ी और अस्थिर है, जिससे यात्रियों को भारी चुनौती का सामना करना पड़ता है। इंजीनियर भी यह मानते हैं कि चार लेन वाली एकल सड़क का निर्माण एक कठिन काम है। इसलिए वे चढ़ाई और उतरने के लिए अलग-अलग रास्तों का निर्माण कर रहे हैं। इसके लिए वे इस्पात की ऐसी सुरंगें खड़ी करने की सोच रहे हैं, जिससे निर्माण के दौरान गिरने वाले पत्थरों से मौजूदा यातायात को सुरक्षित रखा जा सके।

कश्मीर में हर कोई इस परियोजना के पूर्ण होने की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहा है। क्रिकेट के बल्ले का निर्माण करने वाली कंपनी के एक मालिक ने तो इस राजमार्ग के लिए अपनी भूमि भी दे दी है। योजनानुसार सड़कों का निर्माण 2014 तक और सुरंगों का निर्माण 2016 तक पूरा हो जाने की आशा है। परियोजना के निर्माण से स्थानीय लोगों के व्यवसाय और व्यापार को काफी बढ़ावा मिलने की उम्मीद है। वैसे अभी काफी काम करना बाकी है।

उपर्युक्त दोनों सुरंगों का निर्माण स्थानीय लोगों के लिए वरदान साबित हो रहा है। क़रीब दो दशकों बाद उन्हें लाभप्रद रोज़गार मिला है। सरकार का निर्देश है कि परियोजना में काम करने वाले श्रमिकों में से 90 प्रतिशत रोज़गार स्थानीय लोगों को ही दिया जाना चाहिए। इसी के कारण चेनानी-नश्री सुरंग परियोजना में काम करने वाले 744 लोगों में से 694 लोग स्थानीय हैं। ये लोग 9 किलोमीटर लंबी सुरंग के निर्माण में हाथ बंटा रहे हैं।

इसी प्रकार, काजीगुंड और बनिहाल को जोड़ने वाली 8.4 किलोमीटर लंबी रेल सुरंग के निर्माण पर 436 लोग का कर रहे हैं जिनमें से 67 प्रतिशत यानी 290 श्रमिक स्थानीय हैं। इसके अलावा उप-ठेकेदारों के साथ भी स्थानीय 124 लोग काम कर रहे हैं। निर्माण कंपनी के परियोजना निदेशक के अनुसार अगले कुछ महीनों में क़रीब 200 और स्थानीय लोगों को काम पर रखा जाएगा। श्रमिकों के अतिरिक्त वरिष्ठ पदों पर और तक़नीकी कर्मचारियों के तौर पर भी स्थानीय लोगों को रोज़गार मिला हुआ है। यहां यह बताना महत्वपूर्ण है कि काम करने वाले अधिकांश श्रमिकों और कर्मचारियों का चयन स्थानीय पंचायतों ने किया है। इनमें बुजुर्ग दंपतियों को वरीयता दी गई है जिनका एक बेटा बेरोज़गार था। कुल मिलाकर 58 लोगों को प्रशिक्षण देकर काम दिया गया है। कुछ लोगों को तो प्रशिक्षण के लिए विदेश भी भेजा गया है। इन लोगों को साढ़े नौ हज़ार रुपये से लेकर दस हज़ार रुपये तक का वेतन प्रतिमाह दिया जाता है। साथ ही मुफ़्त भोजन और पास रहने वालों को मुफ़्त बस सेवाएं भी मुहैया कराई जाती हैं। स्वास्थ्य की देखभाल की व्यवस्था भी की गई है। चेनानी-नश्री सुरंग 13 मीटर चौड़ी और 12 मीटर ऊंची है परंतु बनने पर ऊंचाई साढ़े नौ मीटर ही रह जाएगी। दिखावटी छत (फाल्स सीलिंग) के ऊपर से आपातकाल में बाहर निकलने का रास्ता भी होगा। बाहर निकलने के लिए जो सटी हुई सुरंग होगी वह भी पांच मीटर चौड़ी होगी। साथ वाली दूसरी काजीगुंड-बनिहाल सुरंग एकांगी रास्ते वाली सुरंग होगी और उसका आकार भी वही होगा, परंतु ड्राइविंग लेन 3.75 मीटर चौड़ी और आपातकालीन लेन की चौड़ाई 3.25 मीटर चौड़ी रहेगी। इन सुरंगों के निर्माण के लिए क़रीब 20 लाख टन मिट्टी और कचरा निकालना होगा। उच्चतम न्यायालय ने परियोजना की पर्यावरण स्वीकृति दे दी है। ❑

(लेखिका गुड़गांव स्थित अध्यापिका हैं।
ई-मेल : bantu99@gmail.com)

(पृष्ठ 31 का शेषांश)

है। वस्तुओं का उत्पादन वहीं तक हो, जितना मनुष्य के शारीरिक और आध्यात्मिक विकास के लिए ज़रूरी है– उपभोग का ऐसा स्तर जो न इतना कम हो कि अभाव से आक्रांत मनुष्य की सारी ऊर्जा आवश्यक उपभोग की वस्तुएं जुटाने में ही लग जाए और न ही इतना ज़्यादा कि वस्तुओं का अंबार लगाने में ही मनुष्य का सारा कार्यकाल और कल्पना ख़त्म हो जाए।'' विकास के ऐसे विचार विकसित होने के लिए वस्तुओं का भंडार जमा करने की आवश्यकता नहीं होगी। फिर उनके उत्पादन के लिए न तो प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट करने की ज़रूरत होगी और न प्रकृति को प्रदूषित करने की। फिर हम प्राकृतिक नियमों के हिसाब से जल, ज़मीन, आग, हवा तथा वनस्पति आदि का उस अनुपात में उपयोग कर पाएंगे जिससे कि प्रकृति में उनका संतुलन बिगड़ने न पाए। तभी पर्यावरण की सुरक्षा और विकास दोनों साथ-साथ संभव हो पाएंगे। ❑

(लेखक बीआरए बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर के दर्शन विभाग में उपाचार्य हैं)

ब्रिक्स का चौथा शिखर सम्मेलन

● सुरेश अवस्थी

गत 29 मार्च को नयी दिल्ली में हुए ब्रिक्स देशों (अंग्रेज़ी वर्णमाला के अनुसार ब्राज़ील, रूस, भारत, चीन और दक्षिण अफ्रीका के प्रथम अक्षरों से बना संयुक्ताक्षर) का चौथा शिखर सम्मेलन तीसरी दुनिया के देशों के लिए एक सुखद संदेश लेकर आया। सम्मेलन से उभरती दुनिया को अनेक महत्वपूर्ण संदेश मिले हैं। इस सम्मेलन से एक और बात स्पष्ट हुई है कि पांच देशों का यह संगठन अब व्यवस्थित आकार ग्रहण करने लगा है। नयी दिल्ली सम्मेलन में ब्रिक्स देशों ने ब्रिक्स बैंक की स्थापना, विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (आईएमएफ) में सुधार तथा अपना व्यापार स्थानीय मुद्राओं में करने की घोषणा की है। ये निर्णय अत्यंत महत्वपूर्ण हैं और आने वाले समय में वैश्विक अर्थव्यवस्था का रूप बदल सकते हैं। इससे पूर्व हुए तीन शिखर सम्मेलनों में भी अंतरराष्ट्रीय व्यापार के लिए मौद्रिक प्रणाली में सुधार की बात प्रमुखता से उठती रही, परंतु उन गंभीर चर्चाओं को ठोस स्वरूप नहीं दिया जा सका। नयी दिल्ली सम्मेलन में इस संबंध में ठोस निर्णय लिया जा सका, उसके लिए ब्राज़ील की राष्ट्रपति दिलमा रूसेफ, रूस के राष्ट्रपति दमित्री मेदेवदेव, भारत के प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह, चीन के राष्ट्रपति हू जिन्ताओ और दक्षिण अफ्रीका के राष्ट्रपति जेकब जुमा की पश्चिमी देशों के आर्थिक आधिपत्य से बाहर निकलकर आपसी सहयोग से अपने लोगों को बेहतर अवसर और जीवनशैली देने की छटपटाहट को श्रेय दिया जाना चाहिए। पश्चिमी देशों के आर्थिक और राजनीतिक साम्राज्य की न्यायसंगत वैकल्पिक धुरी बनने पर इस संगठन को विकासशील और अल्प विकसित देशों का नैतिक समर्थन मिलना निश्चित है। परंतु यहां यह बात ध्यान देने योग्य है कि प्रस्तावित ब्रिक्स बैंक यदि आने वाले समय में ठोस आकार ग्रहण करता है तो उसे एशियाई विकास बैंक और विश्व बैंक के प्रतिस्पर्धी के रूप में न देखा जाने लगे। यहां आशय ज़रूरतमंद ग़रीब देशों को आसान शर्तों पर ऋण और संसाधन उपलब्ध कराना है। प्रयास यह करना होगा कि शीतयुद्ध वाले दिनों की तरह बात-बात पर अमरीका और यूरोपीय देशों से टकराव न हो। ऐसा होना किसी के हित में नहीं होगा। ब्रिक्स देशों से वैसे यह उम्मीद भी नहीं है।

ब्रिक्स बैंक की स्थापना और स्थानीय मुद्रा में व्यापार का विचार अपने आप में काफी क्रांतिकारी है। वर्तमान में विश्व के व्यापार का 18 प्रतिशत और विदेशी मुद्रा प्रवाह का 53 प्रतिशत ब्रिक्स देशों के बीच होता है। विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष का आधिपत्य समाप्त करने के लिए ब्रिक्स देश आपसी व्यापार और निवेश बढ़ाने के लिए रियाल (ब्राज़ील), रूबल (रूस), रुपये (भारत), युआन (चीन) और रैंड (दक्षिण अफ्रीका) में व्यापार कर सकते हैं। यूरोप में छाए आर्थिक संकट ने विश्व को जता दिया है कि साझा मुद्रा का विचार कारगर नहीं है और स्थानीय मुद्रा में व्यापार के अनेक लाभ हैं। स्थानीय मुद्राओं में क़ारोबार से ब्रिक्स देशों की डॉलर, पौंड और यूरो जैसी मुद्राओं पर निर्भरता में कमी आएगी और वे यूरोप तथा अमरीकी अर्थव्यवस्थाओं पर पड़ने वाले संकट से कम आहत होंगे। इस क़दम से भारत के उन लोगों को बहुत लाभ होगा जो चीन के साथ व्यापार करते हैं। उन्हें चीन से डॉलर के बजाय चीन की मुद्रा युआन में व्यापार करना होगा और चीन के क़ारोबारी भी भारत में रुपये में भुगतान कर यहां से सामान अपने देश ले जा सकेंगे। दोनों ही को अपनी मुद्रा को डॉलर अथवा यूरो में बदलने की आवश्यकता नहीं रहेगी। ब्रिक्स देशों के बीच हुए इस समझौते से सदस्य देशों के बीच व्यापार में अमरीकी डॉलर की भूमिका कम हो जाएगी। ब्रिक्स देशों के बीच सालाना 230 अरब डॉलर का व्यापार होता है। इनमें सबसे बड़ा हिस्सा भारत और चीन के बीच व्यापार का है जो लगभग 60 अरब डॉलर का है। स्थानीय मुद्रा में व्यापार होने से डॉलर की भूमिका कम हो जाएगी। इससे व्यापारियों को बहुत लाभ होगा।

भारत-चीन का परस्पर व्यापार चीन के पक्ष में झुका हुआ है। भारत-ईरान से तेल के आयात पर भुगतान का जो संकट अभी पिछले दिनों सामने आया, वह इस तरह की व्यवस्था होने पर सामने नहीं आ सकता था। चीन की विनिर्माण क्षमता एवं दक्षता, भारत का सेवा क्षेत्र, रूस के तेल भंडार, ब्राज़ील की अधोसंरचनात्मक शक्ति और दक्षिण अफ्रीका का विशाल मानव एवं प्राकृतिक संसाधन यदि आपसी क़ारोबार में साथ आते हैं तो न केवल ब्रिक्स देशों में कायापलट हो सकता है बल्कि पश्चिमी देशों और अमरीका का आर्थिक तथा प्रकारांतर में राजनीतिक दबदबा भी हल्का पड़ जाएगा।

ब्रिक्स के दिल्ली शिखर सम्मेलन में एक और उल्लेखनीय बात हुई है। वह यह कि इन पांच देशों ने अमरीका और यूरोपीय देशों की गोलबंदी का विरोध करने का साहस दिखाया है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर अपनी प्रासंगिकता सिद्ध करने के साथ ही परस्पर हितों के अनुसार ब्रिक्स ने राजनीतिक एजेंडे पर भी मुस्तैदी से अमल करना शुरू कर दिया है। सम्मेलन में पांचों देशों के नेताओं ने स्पष्ट रूप से कहा कि अंतरराष्ट्रीय मामले सुलझाते समय हर देश की संप्रभुता का सम्मान किया जाना चाहिए। इशारा स्पष्ट रूप से पश्चिम एशिया के संकट की ओर था। रूसी राष्ट्रपति मेदेवदेव ने जहां ईरान पर किसी प्रकार की सैन्य कार्रवाई को अनुचित बताया, वहीं चीन ने भी समस्या को वार्ता के ज़रिये हल किए जाने पर ज़ोर दिया। इसके साथ ही, सीरिया के संकट के समाधान के लिए सत्ता परिवर्तन को अनावश्यक बताया गया और कहा गया कि शांति स्थापना के प्रयास को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। सम्मेलन के अंत में जारी दिल्ली घोषणा-पत्र में कहा गया है कि ईरान का तनाव किसी के हित में नहीं है। पांचों देशों ने यह भी घोषणा की कि वे अमरीका के प्रतिबंधों को स्वीकार नहीं करेंगे और ईरान से तेल आयात करना जारी रखेंगे। सीरिया के मामले में भी संयुक्त राष्ट्र के विशेष दूत, पूर्व

पांच देशों में दुनिया की 40 प्रतिशत आबादी

कौन कितना है दमदार

ब्राज़ील
जीडीपी : 2,087.89 अरब डॉलर
प्रतिव्यक्ति आय : 4,699.40 डॉलर
महंगाई दर : 5.80 प्रतिशत
घाटा : 1,291 लाख डॉलर
सरप्लस बजट : जीडीपी का 2.20 प्रतिशत
जीडीपी में वार्षिक वृद्धिदर : 1.40 प्रतिशत
भ्रष्टाचार में रैंकिंग : 73

रूस
जीडीपी : 1,479.82 अरब डॉलर
प्रतिव्यक्ति आय : 2,923.14 डॉलर
महंगाई दर : 3.70 प्रतिशत
बजटी घाटा : जीडीपी का 3.90 प्रतिशत
ट्रेड सरप्लस : 20.50 अरब डॉलर
जीडीपी में वार्षिक वृद्धिदर : 4.8 प्रतिशत
भ्रष्टाचार में रैंकिंग : 143

भारत
जीडीपी : 1,729.01 अरब डॉलर
प्रतिव्यक्ति आय : 822.76 डॉलर
महंगाई दर : 7.65 प्रतिशत
घाटा : 14.76 लाख डॉलर
जीडीपी में वार्षिक वृद्धिदर : 6.10 प्रतिशत
भ्रष्टाचार में रैंकिंग : 95

चीन
जीडीपी : 5,878.63 अरब डॉलर
प्रतिव्यक्ति आय : 2,425.47 डॉलर
महंगाई दर : 3.20 प्रतिशत
बजटीय घाटा : जीडीपी का 2.50 प्रतिशत
ट्रेड सरप्लस : 27.20 अरब डॉलर
भ्रष्टाचार में रैंकिंग : 75

दक्षिण अफ्रीका
जीडीपी : 363.70 अरब डॉलर
प्रतिव्यक्ति आय : 3,745 डॉलर
महंगाई दर : 6.10 प्रतिशत
बजटीय घाटा : जीडीपी का 5 प्रतिशत
व्यापारिक घाटा : जीडीपी का 1.28 अरब डॉलर
जीडीपी में वार्षिक वृद्धिदर : 2.90 प्रतिशत
भ्रष्टाचार में रैंकिंग : 64 ❑

महासचिव कोफी अन्नान की मध्यस्थता में किए जा रहे प्रयासों का स्वागत किया गया है। ब्रिक्स ने अपने घोषणा-पत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया है कि परमाणु ऊर्जा विकसित करना ईरान का अधिकार है और उसके विरुद्ध ऐसा कुछ न किया जाए जिससे उसकी संप्रभुता का उल्लंघन होता हो।

ब्रिक्स के दिल्ली सम्मेलन की सफलता का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि जिस देश की प्राधान्य और अभिभावी नीतियों के विरोध में सदस्य देशों ने अपनी आवाज़ उठाई, उसी अमरीका ने कहा है कि बहुपक्षीय (अंतरराष्ट्रीय) संस्थानों में बड़ी भूमिका निभाने के ब्रिक्स के प्रयासों से अंतरराष्ट्रीय व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में मदद मिलेगी। अमरीकी विदेश मंत्रालय के प्रवक्ता मार्क टोनर ने सम्मेलन की समाप्ति पर जारी घोषणा-पत्र पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए वाशिंगटन में कहा कि ब्रिक्स देशों की सक्रियता से विश्व व्यवस्था में मज़बूती आएगी। ईरान के बारे में ब्रिक्स देशों के विचार के बारे में भी उन्होंने कहा कि अमरीका का इन देशों से कोई मतभेद नहीं है और ईरान के विरुद्ध शक्ति प्रयोग का अभी तक कोई निर्णय नहीं लिया गया है।

ब्रिक्स देशों के पास विश्व का 30 प्रतिशत भू-भाग है और दुनिया की क़रीब 43 प्रतिशत जनसंख्या इन पांच देशों में रहती है। तीन अरब लोगों वाले ब्रिक्स देश ख़रीद क्षमता के लिहाज़ से विश्व के सबसे आकर्षक बाज़ार हैं। ब्रिक्स देशों के महत्व का अंदाज़ा इसी बात से लगाया जा सकता है कि वैश्विक जीडीपी (सकल घरेलू उत्पाद) में इन देशों की हिस्सेदारी 25 प्रतिशत से अधिक है। पांचों देश विश्व की सबसे उभरती अर्थव्यवस्थाओं में शुमार हैं। समय बीतने के साथ ही इनकी शक्ति और क्षमता में वृद्धि भी हो रही है। रूस तो पहले से ही एक उन्नत देश रहा है। कई ऐसी वैश्विक समस्याएं हैं जिनको सही रूप से हल करने के लिए ब्रिक्स देशों का एक मंच पर आना समय की मांग है। विश्व व्यापार संगठन के तहत चल रही दोहा दौर की वार्ता को अंजाम तक पहुंचाने और जलवायु परिवर्तन के मसले पर चीन और भारत जैसे देशों पर पश्चिमी देशों के बढ़ते दबाव का सामना करने के लिए ब्रिक्स देशों को एक साथ और एक सुर में बोलना ज़रूरी है। भारत, चीन, रूस, ब्राज़ील और दक्षिण अफ्रीका दुनिया के अलग-अलग छोरों में फैले हुए देश हैं। उनके बीच विचारधारा, राजनीति, भूगोल और इतिहास से पैदा हुए बड़े मसले भी मौजूद हैं। परंतु विश्व का भविष्य संवारने में यदि वे अहम भूमिका निभाने के इच्छुक हैं तो उन्हें अपने मतभेदों को भुलकर, टकरावों को छोड़कर सहमति के बिंदुओं को तलाशना ही होगा। ब्रिक्स की सफलता, आज विश्व की अभिलाषा बन गई है।

यह संयोग की बात है जब ब्रिक्स देश दिल्ली सम्मेलन में अपना एक बैंक बनाने के बारे में चर्चा कर रहे थे, विश्व बैंक के तत्कालीन अध्यक्ष राबर्ट जोकि भारत में ही थे, ने प्रस्तावित ब्रिक्स बैंक का समर्थन किया और कहा कि यदि ब्रिक्स देश ऐसा कोई संस्थान बनाना चाहते हैं तो विश्व बैंक उसका साझीदार बनना चाहेगा। विश्व बैंक अपना अनुभव और ज्ञान ब्रिक्स देशों के साथ साझा करने को तैयार है। ❑

(लेखक नयी दिल्ली स्थित स्वतंत्र पत्रकार हैं)

भारतीय नागर विमानन के सौ साल

● अरुण कुमार वर्मा

सृष्टि में मनुष्य जब से अस्तित्व में आया तब से ही पक्षियों की तरह उड़ने की कल्पना उसके मन में विद्यमान थी। पुराणों में देवताओं के उड़ने का प्रमाण भी वर्णित है। नारद देवलोक से मनुष्य लोक की ख़बरों का आदान-प्रदान उड़कर ही करते थे। श्रीराम के लंका पर विजय के उपरांत पुष्पक विमान से आने का वर्णन मिलता है। ये सारे तथ्य कहीं-न-कहीं हवाई जहाज़ के परिकल्पना की पृष्ठभूमि को दर्शाते हैं। अठारहवीं शताब्दी के महान चिंतक लियोनॉर्डो द विन्सी ने पहली बार अपनी प्रयोगशाला में हवाई जहाज़ का मॉडल तैयार किया था। उन्होंने चीनी खिलौना निर्माताओं द्वारा किए गए एरियल स्क्रू का उपयोग करते हुए हेलीकॉप्टर बनाने का प्रयास भी किया था। आकाश में उड़ने का प्रयास जारी रहा। गुब्बारे एवं ग्लाइडर के सहारे उड़ने के प्रयास भी किए गए और उसे उड़ने का स्वरूप भी दिया गया परंतु मनुष्य के उड़ने का सपना साकार किया राइट बंधुओं (विलवर राइट एवं ओरविल राइट) ने। 17 दिसंबर, 1903 को ओरविल ने अपने जहाज़ फ्लायर से किलडेविड पहाड़ियों के पास पहली बार उड़ान भरी थी। उनका विमान दस फुट की ऊंचाई से 12 सेकेंड तक 120 फुट की दूरी तक उड़ा। राइट बंधु के इस खोज का पूरे विश्व ने स्वागत किया। इसे रक्षा एवं व्यावसायिक क्षेत्र में मान्यता मिली और यह सबसे तेज़ गति का परिवहन साबित हुआ।

भौगोलिक दृष्टि से विविधतापूर्ण एवं विशाल देश भारत में वायु परिवहन जैसे तीव्रगामी साधन का महत्व स्वत: ही सिद्ध हो जाता है। यहां पर सर्वप्रथम 1911 में इलाहाबाद से नैनी के बीच विश्व की प्रथम डाक सेवा का परिवहन किया गया। सन 1932 में टाटा सन्स लिमिटेड के प्रयत्नों से दिल्ली व मुंबई से क्रमश: कराची और मद्रास के बीच हवाई सेवा शुरू की गई। 1933 में इंडियन नेशनल एयरवेज कंपनी की स्थापना हुई जिसने कराची और लाहौर के बीच अपनी सेवाएं शुरू की। 1935 में टाटा एयरवेज कंपनी द्वारा मुंबई से तिरुअनंतपुरम और 1937 में मुंबई, दिल्ली मार्गों पर भी नवीन वायु सेवा चालू की गई। द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत इंडियन नेशनल एयरवेज और टाटा एयरवेज के विमान सोलह मार्गों पर चलाए गए। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय तक देश में 21 विमान कंपनियां स्थापित हो चुकी थीं।

विमान सेवा को और अधिक सुदृढ़ एवं सुविधाजनक बनाने हेतु भारत सरकार ने 1947 में विमान परिवहन जांच समिति का गठन किया। जांच समिति ने अपने प्रतिवेदन में विमान सेवा की अनेक कठिनाइयों की ओर सरकार का ध्यान आकृष्ट किया जिसमें कंपनियों की संख्या का अधिक होना, लाइसेंस मिलने में देरी, अधिक साज-सज्जा का होना एवं तेल के ऊंचे मूल्यों के कारण संचालन व्यय में वृद्धि शामिल था। फलत: समिति के सुझावों को ध्यान में रखते हुए 1953 में विमान परिवहन का राष्ट्रीयकरण कर दिया गया और सभी कंपनियों को नवनिर्मित दो निगमों के अधीन रखा गया– भारतीय विमान निगम (इंडियन एयरलाइंस कार्पोरेशन) एवं एयर इंडिया निगम (एयर इंडिया कार्पोरेशन)।

इंडियन एयरलाइंस देश के भीतरी भागों तथा सीमावर्ती चौदह देशों (पाकिस्तान, बर्मा, नेपाल, भूटान, अफगानिस्तान, बांग्लादेश, मालदीव, श्रीलंका आदि) के साथ वायुमार्ग की व्यवस्था करता था। इंडियन एयरलाइंस के अधीन आठ कंपनियां (एयरवेज इंडिया, एयर इंडिया, एयरसर्विस ऑफ इंडिया, भारत एयरवेज और कलिंग एयरवेज) कार्यरत थीं। देश के दूसरे वैमानिक निगम एयर इंडिया विदेशों को अपनी हवाई सेवा उपलब्ध कराता था। शुरू में एयर इंडिया 44 देशों को अपनी सेवाएं प्रदान कर रहा था। इन दो निगमों के अतिरिक्त जनवरी 1981 में देश की घरेलू उड़ानों के लिए 'वायुदूत' नामक तीसरे निगम की स्थापना की गई जो दुर्गम क्षेत्रों अथवा उन क्षेत्रों में अपनी सेवाएं उपलब्ध कराता था जहां इंडियन एयरलाइंस की सेवाएं उपलब्ध नहीं होती थीं। बाद में इसका भी इंडियन एयर लाइंस में विलय कर दिया गया।

देश में पर्यटन और यातायात को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 'पवनहंस हेलीकॉप्टर लिमिटेड' की स्थापना हेलीकॉप्टर कार्पोरेशन ऑफ इंडिया के नाम से कंपनी अधिनियम, 1956 के अधीन सरकारी कंपनी के रूप में की गई। इसका मुख्य उद्देश्य समुद्र में तेल की खोज हेतु तेल क्षेत्र में हेलीकॉप्टर सेवाएं देना, पहाड़ी तथा दुर्गम क्षेत्रों में परिचालन एवं यातायात तथा पर्यटन को बढ़ावा देने हेतु चार्टर उड़ानें उपलब्ध कराना है। पवनहंस हेलीकॉप्टर लिमिटेड अपने परिचालन बेड़े में कुल 35 हेलीकॉप्टर के साथ एशिया में विशालतम हेलीकॉप्टर परिचालक के रूप में स्थापित है। धार्मिक आस्था वाले देश भारत में पवनहंस श्रद्धालुओं को केदारनाथ और वैष्णों देवी के दर्शन की सेवाएं भी उपलब्ध कराता है। देश के भीतर दुर्गम स्थानों पर पवनहंस अपनी सेवाएं दे रहा है। मेघालय, त्रिपुरा, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश राज्य सरकारों के तत्वाधान में यह 46 क्षेत्रों के लिए 24 स्थानों पर एक सप्ताह में 120 उड़ानों का परिचालन करता है। इसका पंजीकृत मुख्य कार्यालय नयी दिल्ली तथा क्षेत्रीय कार्यालय मुंबई और नयी दिल्ली में हैं।

नागर विमानन के विकास और निगमन के लिए राष्ट्रीय नीतियां तथा कार्यक्रम तैयार करने, नागरिक हवाई यातायात के क्रमिक विकास और विस्तार के लिए योजनाएं बनाने और उन्हें लागू करने की जिम्मेदारी नागर विमानन मंत्रालय की है। इसके कार्यों में हवाईअड्डा सुविधाओं और हवाई यातायात की सुविधाओं के अलावा उड्डयन सुरक्षा, विमान से यात्रियों तथा सामान को एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुंचाने आदि कार्यों की देखभाल भी शामिल हैं। मंत्रालय रेलवे सुरक्षा आयोग के लिए भी प्रशासनिक रूप से जिम्मेदार है जो रेलवे अधिनियम के अंतर्गत गठित एक वैधानिक संगठन है। भारत में नागरिक उड्डयन के

क्षेत्र में नागरिक उड़ान नियमों को लागू करने वाला नियामक संगठन भारतीय नागर विमानन महानिदेशालय है। इसकी जिम्मेदारियों में निम्न कार्य शामिल हैं:

विमानन अधिनियम, 1937 के अंतर्गत देश और विदेश के भीतर विमानन सहायता सेवाओं का निगमन करना, विमान चालकों, विमान रखरखाव इंजीनियरों और उड़ान इंजीनियरों को लाइसेंस जारी करना,

नागरिक विमानों का पंजीकरण, उड़ने योग्य उपयुक्त जहाज़ों को प्रमाण-पत्र जारी करना, अंतरराष्ट्रीय नागर विमानन के मध्य समन्वय स्थापित करना, उड़ान के दौरान होने वाली दुर्घटनाओं की जांच, उड़ान/ग्लाइडिंग क्लबों के प्रशिक्षण गतिविधियों पर निगरानी, हवाईअड्डों तथा विमानवाहकों को लाइसेंस जारी करना, विभिन्न देशों के साथ द्विपक्षीय उड़ान सेवाओं के साथ वायु परिवहन के मामलों पर सरकार को सलाह देना, हल्के विमान, ग्लाइडर एवं विचों का विकास, विमान अधिनियम, 1934 एवं 1937 तथा विमान संबंधी अन्य कानून का संशोधन आदि।

भारतीय नागर विमानन के बेहतरीन संचालन की दृष्टि से 27 अगस्त, 2007 को नेशनल कंपनी ऑफ इंडिया लिमिटेड अस्तित्व में आया। इंडियन एयरलाइंस और एयर इंडिया का समामेलन करके इसका गठन किया गया। इस समामेलन के बाद इसका नाम एयर इंडिया ही रखा गया और इसका शुभंकर महाराजा और प्रतीक उड़ते हुए हंस में नारंगी रंग के कोणार्क चक्र को प्रतिधारित किया गया। वर्तमान में इसके नियंत्रण में निम्न कंपनियां कार्यरत हैं– होटल कार्पोरेशन ऑफ इंडिया (एचसीआई), एयर इंडिया चार्टर लिमिटेड, एयर इंडिया ट्रांसपोर्ट सर्विस लिमिटेड, एयर इंडिया इंजीनियरिंग सर्विसेज लिमिटेड, वायुदूत, एयरलाइंस एलाएड सर्विस लिमिटेड, आईएएस एयर पोर्ट सर्विसेज लिमिटेड आदि।

यात्रियों की सुविधा और पर्यटन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से कंपनी अधिनियम, 1956 के तहत भारतीय होटल निगम लिमिटेड की स्थापना 8 जुलाई, 1974 को की गई। एयर इंडिया ने विश्वभर में विमानन कंपनियों की इस क्षेत्र में भागीदारी को देखते हुए होटल व्यवसाय के क्षेत्र में क़दम रखा। इसका स्वामित्व एयर इंडिया लिमिटेड के पास है। इसका कार्य हवाई अड्डों तथा अन्य पर्यटन स्थलों पर यात्रियों को बेहतर खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराना है। वर्तमान में इसकी इकाइयां सेंटॉर होटल दिल्ली एयर पोर्ट , सेटॉर होटल लेक व्यू श्रीनगर एवं फ्लाइट किचेन दिल्ली और मुंबई हैं।

यात्रियों की सुरक्षा व्यवस्था नागर विमानन की प्रमुख चुनौतीपूर्ण जिम्मेदारी है। वर्तमान में यह जिम्मेदारी और भी बढ़ती जा रही है। इस दिशा में भारतीय नागर विमानन महानिदेशालय बहुत ही सतर्क है। सुरक्षा की दृष्टि से सुरक्षा ब्यूरो का गठन किया गया है। 10 दिसंबर, 1976 को अगवा हुए इंडियन एयरलाइंस के हवाई जहाज के बाद गठित पांडेय समिति की रिपोर्ट पर जनवरी 1978 में इसने नागर विमानन महानिदेशालय के एक प्रकोष्ट का रूप ले लिया। जून 1985 में 'कनिष्क' दुर्घटना के बाद एक अप्रैल, 1987 को नागर विमानन सुरक्षा ब्यूरो (बीसीएएस) को नागर विमान के अधीन एक स्वतंत्र विभाग का दर्ज़ा दिया गया। इसकी जिम्मेदारी भारत एवं विदेशी हवाईअड्डों पर अंतराष्ट्रीय और घरेलू उड़ानों के संबंध में मानक और सुरक्षा उपाय तय कराना है। ब्यूरो राष्ट्रीय विमान सुरक्षा कार्यक्रम के विकास, रखरखाव, नवीकरण, गैरकानूनी गतिविधियों की रोकथाम, आपातकालीन संचालन तथा संकटकालीन प्रबंधन करता है। ब्यूरो का मुख्यालय दिल्ली में है तथा दिल्ली, मुंबई, चेन्नई एवं कोलकाता हवाईअड्डों पर इसके क्षेत्रीय कार्यालय हैं।

भारतीय नागर विमानन महानिदेशालय पायलटों के प्रशिक्षण के क्षेत्र में नयी-नयी तक़नीक इज़ाद करता रहता है जिससे दुर्घटनाओं से बचने में सहायता मिलती है। पायलटों के उड़ान एवं स्थल प्रशिक्षण में सुधार लाने के उद्देश्य से इंदिरा गांधी राष्ट्रीय उड़ान अकादमी (इगुआ) की स्थापना रायबरेली में की गई है। अकादमी के पास अत्याधुनिक एवं परिष्कृत ट्रेनर एवं प्रभावी स्थल प्रशिक्षण प्रदान करने के लिए नवीन दृश्य-श्रव्य प्रशिक्षण सुविधाएं उपलब्ध हैं। इगुआ का उद्देश्य सिर्फ़ पायलट बनाने का प्रशिक्षण ही नहीं बल्कि उन्हें एयरोनॉटिक्स के क्षेत्र में प्रभावी तंत्र प्रबंधक भी बनाना है। अंतरराष्ट्रीय मानकों के समकक्ष मानक स्तर प्राप्त करने के उद्देश्य से कनाडा की कंपनी सीएई से करार किया गया है। नागर विमानन मंत्रालय एवं सीएई के बीच करार के अनुसार 1 मार्च, 2008 को इगुआ के प्रबंधन को सीएई ने अपने हाथ में ले लिया है। प्रशिक्षण के क्षेत्र में अधिक पायलटों की आवश्यकता एवं अंतरराष्ट्रीय विमानन प्रशिक्षण प्रतिस्पर्धा की दृष्टि से राजीव गांधी राष्ट्रीय फ्लाइंग प्रशिक्षण संस्थान की स्थापना की गई। यह संस्थान दिसंबर 2008 से अपनी सेवाएं दे रहा है। इस क्षेत्र में सरकारी संस्थानों के अतिरिक्त नौ निजी संस्थानों एवं 41 फ्लाइंग क्लब भी कार्यरत हैं। ग्लाइडिंग प्रशिक्षण के क्षेत्र में राजकीय ग्लाइडिंग संस्थान पुणे अपनी उत्कृष्ट सेवा प्रदान कर रहा है। वर्तमान में महिला पायलटों की संख्या में वृद्धि हुई है। प्रथम महिला पायलट सरला ठकराल ने 1936 में उड़ान भरकर इस मिथक को तोड़ा कि महिलाएं पायलट नहीं हो सकतीं।

हवाईअड्डों के संरचनात्मक ढांचे में विस्तार और बुनियादी सुविधाओं को ध्यान में रखते हुए एक अप्रैल, 1995 को भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण अस्तित्व में आया। प्राधिकरण देश में 15 अंतरराष्ट्रीय हवाईअड्डों एवं 87 घरेलू हवाईअड्डे तथा 25 नागरिक विमानन टर्मिनल सहित 127 हवाईअड्डों का प्रबंधन कर रहा है। भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण यात्री विमानतल का निर्माण, गमन हेतु घरेलू टर्मिनल का निर्माण, नया अंतरराष्ट्रीय टर्मिनल भवन तथा आधुनिक यात्री सुविधाएं उपलब्ध कराने का कार्य कर रहा है। भारतीय विमानपत्तन और इसरो के द्वारा 'गगन परियोजना' को अस्तित्व में लाने का कार्य चल रहा है। इसके दो चरण का कार्य पूरा हो गया है और अंतिम चरण की निविदा पूरी हो चुकी है तथा कार्य प्रक्रियाधीन है। इस परियोजना के पूरा हो जाने से अधिकांश भूमि आधारित दिक्चालन साधन बदल दिए जाएंगे तथा एयरक्राफ्ट को एक स्तरीय सूक्ष्म पहुंच व अवतरण मार्गदर्शन देना संभव होगा जोकि उपकरण अवतरण प्रणाली के प्रावधानों को बाधित करने वाली भूभागीय परिस्थितियों के कारण अब तक उपलब्ध नहीं थी। इसके पूरा हो जाने से हवाई जहाज़ की लैंडिंग में आने वाली समस्याओं से उबरा जा सकेगा।

भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण हवाईअड्डों के आधुनिकीकरण का कार्य तेज़ी से कर रहा है। इसके तहत दिल्ली अंतरराष्ट्रीय हवाईअड्डा लिमिटेड और भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण के मध्य 4 अप्रैल, 2006 को प्रचालन प्रबंधन तथा विकास करार पर हस्ताक्षर किए गए। वर्ष 2009-10 के पहले 6 महीने के दौरान पूरे किए गए प्रमुख कार्यों में रनवे 11/29, रनवे के लिए समांतर टैक्सी मार्ग, 5 रैपिड एक्जिट टैक्सी मार्ग, संपर्क टैक्सी मार्ग,

अंतरराष्ट्रीय टर्मिनल नवीकरण, हज टर्मिनल नवीकरण, घरेलू आगमन टर्मिनल का विस्तार तथा घरेलू टर्मिनल सड़क को चौड़ा करना शामिल है। मुंबई अंतरराष्ट्रीय हवाईअड्डे के आधुनिकीकरण की परियोजना चल रही है। इसे 31 दिसंबर, 2012 तक पूरा करने का लक्ष्य रखा गया है। भारतीय विमानपत्तन सरकार के निर्णयों के अनुसार समयबद्ध कार्यक्रम में देश के 35 गैर-मेट्रो हवाईअड्डों के स्तरोन्यन तथा आधुनिकीकरण का कार्य कर रहा है।

पर्यावरण की दृष्टि से हरियाली युक्त विमानपत्तन का विकास किया गया है। 24 अप्रैल, 2008 को सरकार ने 'ग्रीन एयरपोर्ट' के लिए योजना घोषित की। प्रथम ग्रीन एयरपोर्ट बंगलुरु के निकट देवनहल्ली में 24 मई, 2008 से कार्यरत है। हैदराबाद के निकट शम्शाबाद में भी ग्रीनफील्ड एयरपोर्ट विकसित किया गया है। अब तक केंद्र सरकार ग्रीनफील्ड एयरपोर्टों की स्वीकृति गोवा (मोपा), नवी मुंबई, सिंहदुर्ग, बीजापुर, डाबर, कन्नूर, पॉकयाग, दुर्गापुर, सिमोगा, गुलमर्ग, होसाना, पलादी तथा ईटानगर को दी है। सरकार बुनियादी सुविधाओं को मज़बूती प्रदान करने हेतु योजनाओं को आरंभ करने की दिशा में उन्मुख है। यह योजना पारदर्शी, भविष्यसूचक और प्रदूषण मुक्त पर्यावरण में सहायक सिद्ध होगी।

भारतीय नागर विमानन जहां एक ओर यात्री सुविधाओं में क्रांतिकारी परिवर्तन ला रहा है वहीं दूसरी ओर कार्गो सेवा को भी समृद्ध बना रहा है। कार्गो प्रचालन को सुचारू बनाने एवं निर्यातों की सहायता हेतु 'ओपन स्काई पॉलिसी' की घोषणा अप्रैल 1990 में की गई। इस नीति के अंतर्गत विदेशी एयरलाइंस या निर्यातक संघ माल ढुलाई के लिए देश में किसी मालवाहक को ले जा सकते हैं। इस दिशा को और प्रोत्साहित करने के लिए नागरिक विमानन मंत्रालय ने 29 सितंबर, 2009 को एक आदेश जारी कर सभी भारतीय हवाईअड्डों पर विमान कार्गो के लिए मुक्त अवधि निर्धारित किया है।

भारत अंतराष्ट्रीय विमानन संगठन का सदस्य है तथा प्रारंभिक अवस्था से ही इसके परिषद में शामिल है। अंतराष्ट्रीय स्तर पर अपनी उत्कृष्टता क़ायम रखने के लिए अनेक देशों के साथ समझौता एवं अंतरराष्ट्रीय विमानन संगठन के सम्मेलनों में भाग लेता रहता है। 07-09 दिसंबर, 2009 को भारत ने संयुक्त राष्ट्र अमरीका शीर्ष सम्मेलन में भाग लिया। इस सम्मेलन का लक्ष्य सरकार से सरकार और उद्योग से उद्योग को प्रोत्साहित करना रहा। इससे भारतीय नागरिक उड्डयन और उड्डयन उद्योग के प्रतिनिधि का नयी तक़नीकी को पहचानने, आधुनिकीकरण और व्यय को उचित तरीक़े से उपयोग करने में सहायता मिली। 11 फरवरी, 2010 को भारत और फ्रांस के बीच तीन समझौतों पर हस्ताक्षर किए गए जिनमें उड्डयन सुरक्षा, द्विपक्षीय विमान सेवा और संबंधित विमान सेवा करारों का संशोधन तथा तक़नीकी सहायता शामिल है। नेपाल और अफगानिस्तान के बीच तक़नीकी सहयोग संधि में कर्मचारियों को प्रशिक्षण देने का कार्य भारतीय नागर विमानन महानिदेशालय द्वारा दिया जाएगा। सुरक्षा पर विमानन संयुक्त समूह की बैठक 20-21 जनवरी, 2010 को दिल्ली में आयोजित हुई। इस बैठक में एयर मार्शल और सह हवाईयात्राओं की तक़नीकी तैनाती पर दो समझौते ज्ञापन पर हस्ताक्षर हुए। भारत और अमरीका के बीच सुरक्षा सहयोग के मामलों की शुरुआत हुई। सुरक्षा की दृष्टि से अब एयरमार्शल और दुर्घटना से बचाव के लिए सह हवाईयात्रा टेक्नीशियन की व्यवस्था उड़ान के समय होने लगी है।

विमानन के क्षेत्र में हाल के वर्षों में भारत में चमत्कारिक प्रगति हुई है। इस समय देश में ऐसी कंपनियां हैं जो यात्री एवं माल ढुलाई सेवाएं दे रही हैं। वायु परिवहन कंपनियां सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में बेहतर कार्य कर रही हैं। भारतीय राष्ट्रीय विमान कंपनी लिमिटेड, एयर इंडिया चार्टर लिमिटेड, एलायंस एयर सार्वजनिक क्षेत्र की कंपनियों के अतिरिक्त 8 निजी एयरलाइंस हैं जिनमें- जेट एयरवेज, इंडिया लिमिटेड, सहारा एयरलाइंस, डेक्कन एयरलाइंस, किंगफिशर एयरलाइंस, गो एयरलाइंस इंडिया प्रा. लिमिटेड, पैरामाउंट एयरवेज, इंडिया ग्लोब एविएशन (इंडिगो) हैं जो घरेलू क्षेत्र में संचालित हैं। इससे यात्रियों को बेहतर सेवा के चुनाव का व्यापक अवसर मिल रहा है। इसके अलावा एक नयी एयर लाइंस की सूची तैयार की गई है। सूचीगत वायु यातायात सेवा को छोटे शहरों से जोड़ने का कार्य प्रारंभ हो गया है। एमडीएलआर एयरलाइंस जल्दी ही पूर्वोत्तर राज्यों में आने वाली है।

भारतीय नागर विमानन के परिचालन और संरचनात्मक ढांचे में बहुत प्रगति हुई है। दुर्लभ समझी जाने वाली वस्तु अब लोगों के नज़दीक आ रही है। सुरक्षा की दृष्टि से एयरमार्शल की नियुक्ति और गगन परियोजना से लैंडिंग की समस्या को दूर किया जा रहा है। हाल के वर्षों में विमान अगवा होने और दुर्घटनाओं की संख्या में कमी आई है। हवाईअड्डों का विस्तार, आधुनिकीकरण और हरे-भरे हवाईअड्डों का विकास हुआ है। हवाईअड्डों को स्वस्थ प्रतिस्पर्धा के दायरे में लाने के उद्देश्य से 12 मई, 2009 को विमानपत्तन आर्थिक नियामक की स्थापना की गई है। इसके द्वारा सरकारी और निजी निवेश को प्रोत्साहन, यातायात सेवा, हवाई यातायात सेवा और परिचालन कार्यकुशलता को बढ़ाने का कार्य सफलतापूर्वक किया जा रहा है। भारतीय नागर विमानन अपनी हवाई सेवाओं के साथ-साथ सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह भी करता है। रोज़गार के क्षेत्र में भारतीय नागर विमानन की भूमिका अग्रणी है। यह युवा पीढ़ी को रोज़गार के सुनहरे अवसर प्रदान करता है। आधुनिक प्रौद्योगिकी के विस्तार के साथ एयर इंडिया भी यात्रियों को इंटरनेट द्वारा टिकट बुकिंग और खरीदने की सुविधा प्रदान करता है। आज 90 प्रतिशत घरेलू टिकट ई-टिकटिंग से ही बुक हो रहे हैं। एयर इंडिया ने आरक्षण की 24 घंटे की जानकारी के लिए, फ्लाइट के आने-जाने, उड़ानों की सूचना और सीटों की बुकिंग संबंधी जानकारी के लिए टॉल फ्री नंबर से भी व्यवस्था कर दी है।

भारतीय नागर विमानन ने इन सौ सालों में आशातीत प्रगति की है परंतु फिर भी विमानन के क्षेत्र में अभी भी बहुत संभावनाएं मौजूद हैं। अभी भी छोटे शहरों और विरासत स्थलों को विमानन सेवा से जोड़ना है। महानगरों में हवाईअड्डों के दबाव को कम करने के लिए अन्य हवाई अड्डों का निर्माण एवं उससे नज़दीक के शहरों के हवाईअड्डों का विस्तार करके उड़ान को बांट कर दबाव कम करने का प्रयास किया जा सकता है। पायलट के प्रशिक्षण और लाइसेंस की व्यवस्था में सावधानी अपेक्षित है।

भारतीय नागर विमानन बीते सौ सालों में नियामक परिचालन और मूलभूत संरचनात्मक ढांचे में विकास की ऊंचाइयों पर है और उत्तरोत्तर प्रगति पथ पर अग्रसर है। यह यात्रियों की सुविधा, सुरक्षा के प्रति जागरूक और प्रतिबद्ध है। निश्चित ही भारतीय नागर विमानन का भविष्य उज्ज्वल है। ❑

(लेखक अध्यापन कर्म से संबद्ध हैं।

ई-मेल : arunvermajnv@gmail.com)

सामयिक

सर्वाधिक होगी भारत में शहरी जनसंख्या

संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार आने वाले दशकों में शहरी जनसंख्या में वृद्धि का एक-तिहाई अंश भारत और चीन के नाम होगा।

भारत की शहरी जनसंख्या में अगले चार दशकों में सबसे अधिक वृद्धि होगी। संयुक्त राष्ट्र की रिपोर्ट में यह जानकारी देते हुए बताया गया है कि चीन का स्थान इसके बाद आएगा। भारत में 2010 और 2050 के बीच शहरी जनसंख्या में 49 करोड़, 70 लाख और जुड़ जाएंगे, जबकि इसी अवधि में चीन में 34 करोड़, 10 लाख नये लोग शहरों में बसने के लिए आएंगे। इनके बाद नाइजीरिया (20 करोड़), अमरीका (10 करोड़, 30 लाख) और इंडोनेशिया (9 करोड़, 20 लाख) का स्थान आता है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा हाल ही में जारी 'विश्व शहरीकरण संभावनाओं की संशोधित रिपोर्ट, 2011' के अनुसार भारत और नाइजीरिया में 2010 और 2050 के बीच शहरी जनसंख्या में जो वृद्धि होगी वह पिछले 40 वर्षों की अवधि में हुई वृद्धि से अधिक होगी। नाइजीरिया में यह प्रवृत्ति अधिक तेज़ी से बढ़ती दिखाई दे रही है। वहां 1970 और 2010 के बीच शहरी जनसंख्या में केवल साढ़े 6 करोड़ की वृद्धि हुई थी, परंतु यह अनुमान लगाया गया है कि 2010 और 2050 के बीच वहां के शहरों में 20 करोड़ और लोग आ बसेंगे। विश्व के सभी देशों की शहरी जनसंख्या में वृद्धि के मामले में नाइजीरिया का स्थान तीसरा होगा।

रिपोर्ट के अनुसार, 2025 में विश्व के सबसे घनी शहरी आबादी वाले शहर के रूप में टोकियो का स्थान कायम रहेगा। तब उसकी जनसंख्या लगभग 3 करोड़, 90 लाख होगी। परंतु आबादी में वृद्धि मामूली ही रहेगी। इसके बाद दिल्ली का स्थान आएगा जिसकी जनसंख्या तब क़रीब 3 करोड़, 30 लाख होगी। चीन के शंघाई शहर की आबादी 2 करोड़, 84 लाख होगी और उसका स्थान तीसरा रहेगा। लगभग 2 करोड़, 70 लाख की शहरी जनसंख्या के साथ मुंबई चौथे स्थान पर रहेगा। इन तीनों शहरों में जनसंख्या में अच्छी-खासी बढ़ोतरी होने का अनुमान है। लागोस (नाइजीरिया), ढाका (बांग्लादेश) और कराची (पाकिस्तान) में भी 2 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से भी अधिक शहरी जनसंख्या बढ़ने की संभावना है। इनके अतिरिक्त भारत के दिल्ली, कोलकाता और मुंबई; चीन के शेनज़ेन, गुआंगजू और शंघाई तथा फिलीपींस के मनीला महानगर मिस्र अथवा तुर्की के शहरों से अधिक तेज़ी से बढ़ेंगे।

जनसंख्या में वृद्धि की यह प्रवृत्ति विभिन्न देशों एवं शहरों की जनसंख्याओं में वृद्धि की जो दर है, उसी के अनुरूप है। विश्व की शहरी जनसंख्या कुछ थोड़े से देशों में ही सिमटी हुई है। 2011 में, तीन अरब 60 करोड़ शहरी निवासियों में से तीन-चौथाई 25 देशों में रहा करते थे। उक्रेन में जहां कुल 31 लाख लोग शहरों में निवास करते थे वहीं चीन के शहरों में 68 करोड़, 20 लाख लोग रहते थे। विश्व की कुल शहरी जनसंख्या में 37 प्रतिशत योगदान चीन, भारत और अमरीका का था।

सर्वाधिक शहरी जनसंख्या वाले 25 देशों में से अधिकतर में अत्यधिक शहरीकृत लोग निवास करते हैं, परंतु आठ देशों में शहरीकरण स्तर 28 से 51 प्रतिशत के बीच ही है। ये शहर विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों– बांग्लादेश, चीन, भारत, नाइजीरिया, पाकिस्तान और इंडोनेशिया में स्थित हैं। इसी प्रकार, वैश्विक शहरी जनसंख्या में वृद्धि भी कुछ ही देशों में सीमित है। 2011 और 2030 के बीच विश्व की शहरी जनसंख्या में 1 अरब, 40 करोड़ लोग जुड़ जाएंगे, जिनमें से 27 करोड़, 60 लाख चीन में और 21 करोड़, 80 लाख लोग भारत में जुड़ेंगे। दोनों देशों की वृद्धि को मिलाकर देखा जाए तो यह कुल वृद्धि के 37 प्रतिशत के बराबर होगी।

चीन में 2000 और 2050 के बीच शहरी विकास ही उसकी शहरी जनसंख्या में वृद्धि का प्रमुख कारण होगा। भारत में शहरी विकास के कारण केवल दो-तिहाई जनसंख्या बढ़ेगी, जबकि एक-तिहाई वृद्धि जनसंख्या में समग्र वृद्धि के कारण होगी। इसके विपरीत, 2050 तक अमरीका का शहरीकरण जनसंख्या में कुल वृद्धि के फलस्वरूप ही होगा।

रिपोर्ट के अनुसार, शहरी जनसंख्या में यह अभूतपूर्व वृद्धि अफ्रीका और एशिया में शिक्षा और जनसेवाओं को सुधारने के नये अवसर प्रदान करेगी। इसके साथ ही यह चेतावनी भी दी गई है कि इससे ग़रीबी, मलिन बस्तियों और शहरी पर्यावरण की समस्याओं से निपटने के लिए रोज़गार, आवास, ऊर्जा और बुनियादी ढांचे से जुड़ी नयी चुनौतियां आ खड़ी होंगी। ❑

अब उपलब्ध है

वार्षिक संदर्भ ग्रंथ

भारत 2012

देश के विकास की
विश्वसनीय और अद्यतन जानकारी के लिए

- अर्थव्यवस्था
- विज्ञान और तकनीक
- सामाजिक विकास
- राजनीति
- शिक्षा
- कला और संस्कृति

मूल्य: 345 रुपये

अपनी प्रति यहां से खरीदें :

हमारे विक्रय केंद्र: • **नई दिल्ली** (फोन 24365610, 24367260)• **दिल्ली** (फोन 23890205) • **कोलकाता** (फोन 22488030) • **नवी मुम्बई** (फोन 27570686) • **चेन्नई** (फोन 24917673) • **तिरुअनंतपुरम** (फोन 2330650) • **हैदराबाद** (फोन 24605383) • **बेंगलूरु** (फोन 25537244) • **पटना** (फोन 2683407) • **लखनऊ** (फोन 2325455) • **गुवाहाटी** (फोन 26656090) • **अहमदाबाद** (फोन 26588669)

प्रतियां प्रमुख पुस्तक केंद्रों में भी उपलब्ध हैं

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें:
व्यापार व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग,
सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली
फोन.: 011–24365610, 24367260, फैक्स : 24365609

ई–मेल : dpd@mail.nic.in
dpd@hub.nic.in
वेबसाइट : www.publicationsdivision.nic.in

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

प्रकाशक व मुद्रक के. गणेशन, महानिदेशक द्वारा प्रकाशन विभाग के लिए ब्रजबासी आर्ट प्रेस लिमिटेड, ई-46/11, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेस-2, नयी दिल्ली-110 020 से मुद्रित एवं प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सी.जी.ओ. कॉप्लेक्स, लोधी रोड, नयी दिल्ली-110 003 से प्रकाशित। वरिष्ठ संपादक : राकेशरेणु

Licenced under U (DN)-55/2012-14
आर.एन.आई. 951/57
R.N.I. 951/57

रजि.सं.डीएल (एस)-05/3231/2012-14
Reg. No. D.L.(S)-05/3231/2012-14 at RMS, Delhi
26 अप्रैल, 2012 को प्रकाशित • 29-30 अप्रैल, 2012 को डाक द्वारा जारी

Just Released

पिछले वर्ष के हल प्रश्न-पत्रों सहित

Code 589 ₹ 330/-

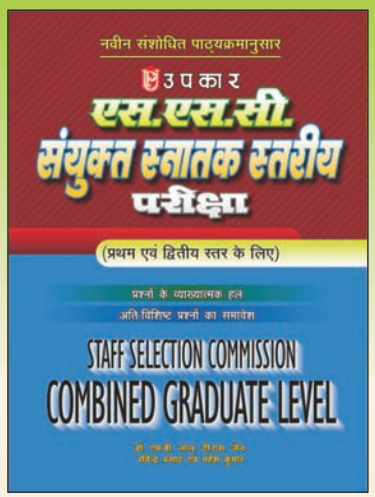

Code 590 ₹ 440/-

एस.एस.सी.
संयुक्त स्नातक स्तरीय परीक्षा

(प्रथम एवं द्वितीय स्तर के लिए)

Code 597 ₹ 155/-

❖ उपकार की पुस्तकें ❖

Code 490 ₹ 499/-

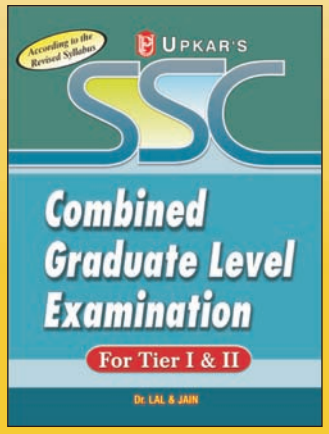

Code 489 ₹ 345/-

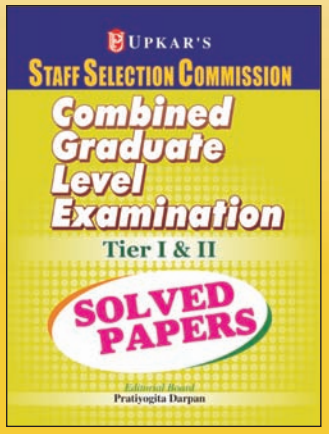

Code 1505 ₹ 160/-

उपकार प्रकाशन (An ISO 9001:2000 Company)
2/11 ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा–282 002 फोन : 4053333, 2531101, 2530966; फैक्स : (0562) 4053330
Website : www.upkar.in **E-mail :** care@upkar.in
ब्रांच ऑफिस : • नई दिल्ली **फोन** : 23251844/66 • हैदराबाद **फोन** : 66753330

YH-15/2012